पाणिनिप्रशस्तिनाटक

गोपालशास्त्री दर्शनकेशरी

पाणिनिप्रशस्तिनाटक

रचयिता

पं० श्री गोपालशास्त्री दर्शनकेशरी

चमोलीमण्डलान्तर्गत ज्योतिर्मठस्य श्रीबदरीनाथवेदाङ्ग-
महाविद्यालय—प्रधानाचार्य

वाराणसी

ज्ञानमण्डल लिमिटेड

संस्कृत भाषा और राष्ट्रभाषाके महान् सेवक, अन्ताराष्ट्रिय राजनीतिके व्याख्याता, अर्थसहित चारो वेदोंके स्वाध्यायकर्ता, पाणिनीय व्याकरण शिक्षा-पद्धतिके अन्यतम प्रेमी, वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालयके संस्थापक एवं राष्ट्रीय स्वातन्त्र्य संग्रामके अनन्य सेनानी उत्तरप्रदेशके भूतपूर्व मुख्यमन्त्री तथा राजस्थानके वर्तमान राज्यपाल महामहिम

डॉ० सम्पूर्णानन्द

महोदयके

करकमलोंमें

सादर समर्पित ।

—गोपालशास्त्री दर्शनकेशरी

भूमिका

डॉ० मङ्गलदेव शास्त्री विद्यामार्तण्ड (भूतपूर्व उपकुलपति वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी) की संक्षिप्त सम्मति—

महाभाष्यकार आचार्य पतञ्जलिके शब्दोंमें जगत्प्रसिद्ध पाणिनीय अष्टाध्यायीकी रचना लौकिक तथा वैदिक शब्दोंके अनुशासनार्थ की गयी थी। इसी दृष्टिसे उसकी भारतवर्षमें मान्यता सहस्रों वर्षोंसे चली आती है। और आज तो उसका महत्त्व विश्वव्यापी है।

पर, यह महान् खेदका विषय है कि इस अप्रतिम वैज्ञानिक ग्रन्थकी प्राचीन पठन-पाठन-पद्धति, जो आचार्य पाणिनिके कालसे ही चली आ रही थी, इधर कुछ कालसे प्रायः विलुप्त-सी हो गयी है। यहाँ तक कि आजीवन संस्कृत (पाणिनीय) व्याकरणमें परिश्रम करनेवाले विद्वानोंमें भी विरले ही ऐसे होंगे, जो इस पद्धतिसे परिचित हैं, या जिन्होंने आद्योपान्त इस ग्रन्थको पढ़ा भी है। संस्कृतकी व्यापक विद्वत्ताकी इससे जो हानि हुई है, वह अकथनीय है।

श्री पं० गोपालशास्त्री दर्शनकेशरी भारतके उन गिने-चुने विद्वानोंमें एक हैं, जो वर्षोंसे उस उच्छिन्नप्राय पद्धतिके उद्धारमें संलग्न हैं ? शास्त्रीजी द्वारा निर्मित 'पाणिनीय नाटकम्' इसी दिशामें उनका अद्‌भुत प्रयत्न है।

सरल तथा हृदयग्राही गद्य-पद्यात्मक संस्कृत तथा राष्ट्रभाषा हिन्दीमें पृथक्-पृथक् लिखित इन दोनों नाटकोंको पढ़कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। मैं चाहता हूँ कि इसका संस्कृतविद्वानों एवं विद्यार्थियोंमें तथा राष्ट्रभाषा-प्रमी जनतामें प्रचार हो। विशेषतः पाणिनीय व्याकरणके विद्वान् इसको ध्यानसे पढ़कर स्वयं अष्टाध्यायीकी प्राचीन पठन-पाठन-पद्धतिके पुनरुद्धारमें प्रवृत्त हों। इत्यलम्।

डॉ० मङ्गलदेव शास्त्री

विद्यामार्तण्ड पूर्वोपकुलपति वाराणसेय संस्कृत-विश्वविद्यालय वाराणसी

२५-५-६५

प्रस्तावना

आज मुझे यह कहते हुए अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि भारतके सर्वप्रिय धार्मिक नेता स्वर्गीय महामना मदनमोहन मालवीयजीने जबसे मुझे कहा कि आप महामुनि पाणिनिका उद्धार करें, तबसे मुझे भी एक धुन चढ़ गयी है। अब हालत यह है कि जब कभी भी मुझे अवसर मिलता है, तब मैं पाणिनिजीके सम्बन्धमें ही सोचता हूँ। ऐसा जान पड़ता है कि महामना मालवीयजीकी प्रेरणा निरन्तर मेरे मस्तिष्कमें गूँज रही है।

महापुरुषोंकी वाणी कभी-न-कभी अवश्य सफल होती है, इस नियमानुसार उत्तर-प्रदेशके भूतपूर्व मुख्यमन्त्री डॉ० सम्पूर्णानन्दजीके संकल्पको सफल बनानेवाले श्री बदरीनाथ केदारनाथ मन्दिर समितिके तत्कालीन अध्यक्ष पं० ब्रजविहारी मिश्र एम० एल० ए० के प्रस्तावसे प्रतिष्ठापित श्री बदरीनाथ वेद-वेदांग महाविद्यालयको सञ्चालित करनेके लिए उन दोनों महापुरुषोंकी प्रेरणासे श्री इन्द्रप्रकाश उपाध्याय वेदान्ताचार्यके साथ जब मैं बदरीनाथधामके निकट जोशीमठमें आया, तब मेरी अन्तरात्मामें यह प्रेरणा हुई कि मेरी 'पाणिनिप्रशस्ति' पुस्तकका अभिनयात्मक स्वरूप बन जाता तो वह दृश्य, काव्य, नाटक-स्वरूपमें अभिनयात्मक होकर पाणिनीय परम्पराका साक्षात् शिक्षाप्रद, सभीके लिए मनोविनोदकारी, विशेषकर विद्यार्थियोंके लिए बड़ा ही उपकारी सिद्ध होता।

यस्य प्रसादात्सफलं समेधते,
सङ्कल्प-बीजं भुवि जातजन्मनाम्।
मुनित्रयं यस्य दयाब्धि-भाजनम्,
स वन्दनीयो गिरिजापतिः प्रभुः ॥

जिस महादेवकी प्रसन्नतासे धरातलके मनुष्यका संकल्प सफल होता है, जिसकी दयाके पात्र पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि ये तीनों मुनि हो चुके हैं, वही गिरिजापति भगवान् मेरे नमस्य हैं। उसी महाप्रभु नटराजराजकी असीम अनुकम्पाका फल है कि मेरा वह सत्यसङ्कल्पाङ्कुर आज दिव्य चतुर्दश शाखा दृश्यरूपोंसे संवलित होकर पाणिनीय नाटक रूप कल्पवृक्ष बनकर उपस्थित है। इस कल्पवृक्षके दृश्य शाखाओंके संक्षिप्त परिचयसे विद्वज्जनों तथा साधारण पाठकोंके औत्सुक्यका परिमार्जन अवश्य होगा।

पाणिनीय व्याकरण कितना परिपूर्ण तथा वैज्ञानिक एवं क्रमिक सूत्रसंग्रह रूपमें निबद्ध है, इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। यह प्राच्य यथा पाश्चात्य उभय द्वीपोंके मनीषियोंको भलीभाँति विदित है। उसके आविर्भाव-कालसे लेकर आज तक संस्कृत-साहित्यमें उसके समकक्ष कोई व्याकरण-ग्रन्थ उपलब्ध ही नहीं हुआ।

कात्यायन पतञ्जलि प्रभृति वैदिक विद्वान्, जयादित्य, वामन, जिनेन्द्रसूरि, धर्मकीर्ति प्रभृति बौद्ध विद्वान् सभीने तो उसके दिव्य गुणोंसे विमुग्ध होकर उसपर अपनी अमोघ लेखनी उठायी है, तथा विश्वको अतुलनीय कल्पनापूर्ण ग्रन्थरत्न प्रदान किये हैं। उन्हीं विश्व-संग्रहणीय सामग्रियोंका अतिसंक्षिप्त संग्रहरूपसे क्रमिक इतिहास बताना इस पाणिनीय नाटकका मुख्य उद्देश्य है। अपने उद्देश्यमें यह अभिनय कितना सफल हुआ है ? यह तो दर्शक, पाठक तथा अभिनेता लोग ही बतायेंगे। यहाँ तो प्रसङ्गसङ्गक्षिप्तेऽन्तरङ्गपरीक्षा अपेक्षित है। अतः यहाँ प्रसंगप्राप्त दृश्य-परिचय संक्षेपसे दिया जा रहा है :—

१. प्रस्तावनादृश्यं प्रथमम्—इस दृश्यमें सूत्रधार-मारिषके परस्पर कथनोपकथन द्वारा बालक और बालिकाओंका स्वातन्त्र्य-गान कराया गया है। साथ ही ग्रन्थकार-परिचयके बाद 'इतिपाणिनि' इस नाटक बीजके अर्थज्ञानके निमित्त संस्कृत-भाषाके अध्ययनका उपक्षेप कर दृश्यकी समाप्ति की गयी है।

२. पाणिनिप्रवेशोपक्षेपणदृश्यं द्वितीयम्—इस दृश्यमें महानन्दकी परिषद्के अध्यक्ष तथा ग्रामाध्यक्षके परस्पर वार्तालाप द्वारा पाणिनिजी का महानन्दकी परिषद्में प्रवेशकी सूचना दी गयी है।

३. महानन्दपरिषदि पाणिनिप्रवेशदृश्यं तृतीयम्—इस दृश्यमें महानन्द सम्राट् तथा पाणिनिजीके कथनोपकथन द्वारा पाणिनीयाष्टाध्यायी शब्दानुशासनकी सारी विशेषताएँ बतायी गयी हैं। अन्त में महानन्द परम प्रसन्न होकर अष्टाध्यायी शब्दानुशासनके प्रचारका प्रबन्ध करते हैं, और पाणिनीयाष्टाध्यायीके सांगोपांग अध्ययनके लिए एक हजार स्वर्णमुद्राके धर्म्य पुरस्कारसे पुरस्कृत करते हैं। यहाँ तीसरे दृश्यके साथ प्रथम अङ्क भी समाप्त हो जाता है।

४. कात्यायनप्रवेशसूचनं चतुर्थं दृश्यम्—इस दृश्यमें सुन्दरक और मुकुर नामके दो राजपुरुष परिहास करते-करते चन्द्रगुप्त मौर्यकी सभामें कात्यायनके प्रवेशकी सूचना देते हैं। इसके पश्चात् यह दृश्य समाप्त हो जाता है।

५. कात्यायनसभाप्रवेशदृश्यं पञ्चमम्—इस दृश्यमें पाणिनिकी कृति अष्टाध्यायी शब्दानुशासनसे विमुग्ध कात्यायनका वार्तिक-प्रणयनकी सूचना सम्राट्की सभामें देना। सम्राट् द्वारा ऐसे उद्भट विद्वान्की प्रशंसा करना दिखाया गया है।

६. पतञ्जलिसभाप्रवेशसूचनं षष्ठं दृश्यम्—इस दृश्यमें रैवतक और भल्लूक भट्ट नामक दो मसखरे राजपुरुषों द्वारा पतञ्जलि महाराजके प्रवेशकी सूचना शुंगसेनापति पुष्यमित्रकी सभामें दी गयी है।

७. पुष्यमित्रसभायां पतञ्जलिप्रवेशदृश्यं सप्तमम्—इस दृश्यमें पाणिनिके गुणोंपर विमुग्ध होकर, कात्यायनकी वार्तिकोंकी सहायतासे पतञ्जलि द्वारा महाभाष्यके प्रणयनकी सूचना दी गयी है। इसके पश्चात् सम्राट् द्वारा अपनी अटूट श्रद्धाके कारण महाभाष्यके प्रचारकी प्रतिज्ञा तथा पतञ्जलिकी भूरि-भूरि प्रशंसा करना दिखलाया गया है। यहाँ छठे दृश्यके साथ दूसरा अंक भी समाप्त हो जाता है।

८. सनकादि-नन्दिकेश्वर-समागमं दृश्यमष्टमम्—इस दृश्यमें सनक सनन्दन, सनत्कुमार तथा नन्दिकेश्वरके परस्पर वार्तालाप द्वारा च्युवांत्सिन नामक चीनी यात्रीका तथा जयादित्य वामनादि बौद्ध विद्वानोंका एवं राजशेखर आदि वैदिक विद्वानों द्वारा पाणिनीय अष्टाध्यायीकी प्रशंसा, उसपर वृत्ति, न्यास आदिके प्रणयनकी सूचना दी गयी है, तथा इन महानुभावोंका स्वर्गसे आकर अभिनयमें सम्मिलित होना दिखाया गया है।

९. च्यूवांत्सिनादिप्रवेशदृश्यं नवमम्—इस दृश्यमें चीनी यात्री च्यूवांत्सिन, जयादित्य, वामन, जिनेन्द्रसूरि, धर्मकीर्ति प्रभृति बौद्ध विद्वान् एवं राजशेखर आदि वैदिक विद्वान् पहलेसे ही सभामें अपने-अपने देश-वेशमें बैठे प्रविष्ट करवाये गये हैं। ये लोग क्रमशः पाणिनिजीकी कृति अष्टाध्यायी शब्दानुशासनकी टीका काशिका, न्यास, पदमञ्जरी प्रभृति ग्रन्थोंके प्रणयनकी सूचना देते हुए पाणिनिजीकी प्रशंसा करेंगे। अन्तमें सभाध्यक्ष सबको धन्यवाद देकर सभा विसर्जित करेंगे। इसके पश्चात् यह नवाँ दृश्य समाप्त हो जायगा और इसीके साथ तीसरा अंक भी समाप्त हो जायगा।

१०. धारानगरीबालिका-संलापदृश्यं दशमम्—इस दृश्यमें धारा नगरीकी शिक्षित बालिकाएँ घड़े लेकर जल भरने जा रही है। बीचमें सभी घड़ोंको आगे रखकर परस्पर कथनोपकथन द्वारा आगेके दृश्यकी सूचना दे देती हैं, तथा प्रसंगवश स्त्री-समाजकी विदुषी नारियोंका मुक्त-कण्ठसे प्रशंसा करती हैं। इसके पश्चात् दशवाँ दृश्य समाप्त हो जाता है।

११. भोजराजसभादृश्यमेकादशम्—इस दृश्यमें राजा भोजकी घोषणाके बाद एक जुलाहा पकड़ कर आता है। वह खूब संस्कृतमें कविता कहता है, तब मन्त्री इसे छोड़ देते हैं। इसके पश्चात् मन्त्रीकी आज्ञा पाकर सभी राजपंडित पाणिनिसूत्रोंपर अपना मत व्यक्त करते हैं। उनकी पाणिनिमुनिपर श्रद्धा देखकर राजा भोज अपनी प्रसन्नता प्रकट करते हैं। स्वयं भी सरस्वतीकण्ठाभरण नामक पाणिनिप्रक्रियाग्रन्थके प्रणयनका

वर्णन करते हैं। इसके पश्चात् दसवें दृश्यके साथ चौथा अंक भी समाप्त हो जाता है।

१२. बालक-बालिका-राजपुरुषसंलापदृश्यं द्वादशम्—इस दृश्यमें किसी विद्यालयमें बालक-बालिकाएँ पाणिनि-प्रशस्तिका गान करते हैं। इसी बीच कोई राजपुरुष प्रशस्तिगानका कारण पूछता है। इसी प्रसंगमें वह हरदत्त पंडित, भट्टोजिदीक्षित, वरदराज भट्ट, नागेशादि देशी विद्वानों तथा वीरवात्सकी आदि बड़े-बड़े विदेशी विद्वानोंका अभिनयमें प्रवेश करनेकी सूचना देगा। इसके पश्चात् बारहवाँ दृश्य समाप्त हो जाता है।

१३. हरदत्तादिविद्वद्दृश्यं त्रयोदशम्--इस दृश्यमें हरदत्तादि नागेशान्त एतद्देशीय विद्वान् तथा वीरवात्सकी प्रभृति विदेशी विद्वानोंका स्वर्गसे आकर पाणिनीय नाटकमें अपनी भूमिका द्वारा पाणिनि-पद्धतिकी प्रशंसामें अपना-अपना विचार व्यक्त करना दिखलाया गया है। इसके पश्चात् यह दृश्य समाप्त हो जाता है।

१४. भारतमातृवरदानदृश्यम् चतुर्दशम्—इस दृश्यमें सर्वप्रथम झण्डा फहराकर भारतमाताकी स्तुति करती हुई बालिकाएँ तथा बालक दिखलाये गये हैं। इसके पश्चात् भारतमाता नाटककी प्रशंसा करती हुई स्वतन्त्र भारतमें अध्ययनका प्रकार बतायेगी। उपनिषदोंके उपदेशसे तथा पाणिनि-प्रकाश बीजके उपसंहारके साथ नाटक समाप्त होता है। यहाँ चौदहवें दृश्यके साथ पाँचवाँ अंक भी समाप्त हो जाता है।

वाग्जन्मवैफल्यमसह्य शल्यं गुणाद्भुते वस्तुनि मौनिता चेत्।

महामना मालवीयजीका ही सत्संकल्प है कि यह पाणिनि नाटक इस प्रकार विशिष्ट रूपमें प्रकाशमें आया। इसके दृश्योंको संक्षिप्त करके, दृश्योंको आगे-पीछे करके अपने उद्देश्यकी सिद्धिकी दृष्टिसे यथाभिलषित एक दो तीन या सभी दृश्योंका—अर्थात् जितनेकी अपेक्षा हो उतने का ही अभिनय करा सकते हैं। अभिनयमें किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं होगी। इसी दृष्टिसे इसमें दृश्यों का सन्निवेश है।

ब्रह्मघ्ने निष्कृतिः शास्त्रे सुरापे चापि निष्कृतिः ।
सुत-विक्रयिणोः पित्रोः कृतघ्ने नैव निष्कृतिः ॥

इस धर्मशास्त्रीय वचनानुसार यहाँ नाटकमें सहायता पहुँचानेवाले देवता एवं मनुष्य दोनोंके प्रति कृतज्ञता-प्रकाश करना भी एक आवश्यक कर्तव्य है। अतः सर्वप्रथम श्री बदरीनाथ भगवान्‌की शरणमें मेरी सर्वथा प्रपन्नता है, जिनकी असीम अनुकम्पासे यह संकल्प अंकुरित हुआ और सफल एवं सम्पन्न भी हो गया। साथ ही उन महापुरुषों, कवियोंके प्रति श्रद्धा प्रकट करता हूँ, जिनके भाव या साक्षात् पद्योंका संग्रह मैंने किया है।

इसके बाद श्री बदरीनाथ-वेद-वेदांग-महाविद्यालयके अध्यापक तथा छात्रोंके प्रति कृतज्ञता-प्रकाश करता हूँ, जिन्होंने इस नाटकका अभिनय कराकर दृश्योंके समन्वयमें सहायता की।

डॉ० श्री वासुदेव शरण अग्रवाल महोदयके प्रति भूयसी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, जिन्होंने इसकी ऐतिहासिक तथ्यताको प्रमाणित किया, भोजराज-दृश्यके सन्निवेशका सुझाव दिया तथा उसकी सामग्री चयन कर मुझे दिया।

इसके मुद्रणार्थ पांडुलिपिको पूर्ण शुद्धताके साथ प्रेस कापी प्रस्तुत कर मुद्रण योग्य बनानेवाले एवं इसे इस दिव्य रूपमें लानेवाले मेरे अभिन्न मित्र पंडित विजय मित्र शास्त्री व्याकरणाचार्यको मेरा शतशः धन्यवाद है। यदि ये सहायक न होते तो यह नाटक पाठकोंके सामने आता ही नहीं।

मेरे कांग्रेस-कार्यके साथी परमोदार भारतरत्न स्वर्गीय शिवप्रसाद गुप्तजीके दौहित्र सुयोग्य उत्तराधिकारी भैया सत्येन्द्रकुमारजी व्यवस्थापक ज्ञानमण्डल तथा आज प्रेस वाराणसीको भूयोभूयः धन्यवाद हो, जिन्होंने अपनी स्तुत्य उदारता द्वारा इसको मुद्रित कराकर प्रकाशित किया है।

अन्तमें, अपने मान्य सम्बन्धी सरयूप्रसाद शास्त्री, द्विजेन्द्र गर्गमुनिको शतशः धन्यवाद है, जिन्होंने इसकी कविताओंको शुद्ध करनेमें सहायता

प्रदान की है। साथ ही मेरे ज्येष्ठ पुत्र चिरञ्जीवी केशरीकृष्ण शास्त्री तथा उनकी धर्मपत्नी दक्षारानी एवं कनिष्ठ चिरञ्जीवी श्री बन्दीकृष्ण त्रिपाठी तथा उनकी धर्मपत्नी संस्कृता देवीको मेरा अमोघ शुभाशीर्वाद है कि इन्होंने इस नाटकके प्रणयनमें मेरी सर्वथा सहायता की है।

यहाँपर पाणिनि-पद्धतिके विशेषज्ञ भूतपूर्व उपकुलपति डॉ० मंगलदेव शास्त्रीका मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने इस नाटकके स्वरूपकी वस्तु-स्थितिका परिचय कराया है।

सर्वान्ते—

यद्ददासि यदश्नासि यज्जुहोषि करोषि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्॥

इस भगवदुक्तिके अनुसार स्वतन्त्र भारतके नायक उसी जगदाधार सर्वव्यापी परमेश्वरको यह पत्र-पुष्पस्थानी कृति समर्पित है।

—गोपालशास्त्री दर्शनकेशरी

नाटकीय पात्र-परिचय

नान्दी	स्तुतिकर्ता नट
सूत्रधार	नाटक-प्रस्थापक
मारिष	सूत्रधारका साथी
बालक बालिका	ध्वजगान करनेवाले विद्यालय-छात्र
ग्रामाध्यक्ष	पटना नगरपालिकाके अध्यक्ष
परिषत्स्थविर	महानन्दकी धर्मसभाका सभापति
प्रतिहारी	भारतसम्राट् महानन्दका द्वारपाल
महाराज	भारत सम्राट् महानन्द
पाणिनि	प्रसिद्ध अष्टाध्यायी ग्रन्थप्रणेता
सुन्दरक, मुकुर	भारतसम्राट् चन्द्रगुप्तके दो राजभृत्य
प्रतिहारी	भारतसम्राट् चन्द्रगुप्तका द्वारपाल
चन्द्रगुप्त	प्रसिद्ध भारतसम्राट् चन्द्रगुप्त
कात्यायन	प्रसिद्ध वार्तिककार दाक्षिणात्य विद्वान्
रैवतक	भारतसम्राट् पुष्यमित्रके रङ्गशालाध्यक्ष
भल्लूकभट्ट	रैवतकका साथी ब्राह्मण पण्डित
प्रतिहारी	भारतसम्राट् पुष्यमित्रका द्वारपाल
पुष्यमित्र	भारतसम्राट् पुष्यमित्र
पतञ्जलि	पुष्यमित्रके प्रधानमन्त्री गोंडानिवासी भाष्यकार प्रसिद्ध विद्वान् पतञ्जलि

सनक सनन्दन सनातन सनत्कुमार	प्रसिद्ध महर्षिगण
नन्दिकेश्वर	प्रत्याहारसूत्रोंपर अध्यात्म व्याख्याकार प्रसिद्ध ऋषि
सभाध्यक्ष	झालातुर नगरके प्रसिद्ध विद्वान्
च्वाङत्सिन	प्रसिद्ध चीनी यात्री
जयादित्य वामन	अष्टाध्यायीकी काशिकावृत्तिके प्रणेता प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान्
जिनेन्द्रबुद्धि	काशिका-व्याख्या (न्यास) प्रणेता बौद्ध विद्वान्
धर्मकीर्त्ति	रूपावतार ग्रन्थ-प्रणेता बौद्ध विद्वान्
राहुल	धर्मकीर्त्तिका शिष्य बौद्ध विद्वान्
राजशेखर	कान्यकुब्जेश्वर महेन्द्रपालका राजदरबारी दाक्षिणात्य वैदिक विद्वान्
क्षेमेन्द्र	बृहत्कथामञ्जरीकार वैदिक विद्वान्
सोमदेव	कथासरित्सागरकर्ता वैदिक विद्वान्
मञ्जुभाषिणी विमर्शिणी अन्यमनस्का प्रत्युत्पन्नमति अन्यमनस्का वाग्मिनी उद्दीप्ता गम्भीरनादा	राजाभोजकी राजधानी धारानगरकी शिक्षिता कन्याएँ कूपपर जल भरने निकलती हुई ।
उद्घोषक	राजाभोजकी आज्ञाओंका डुगडुगी पीटकर प्रचारक
राजमन्त्री	महाराभोजके राजमन्त्री
कुबिन्द	भोजनगरीं (धारा) का रहनेवाला जुलाहा
महाराज	राजाभोज पाणिनिपद्धतिके प्रसिद्ध विद्वान्

पुलिस	महाराजभोजकी धारा नगरीका रक्षक एक रक्षी (पुलिस)
धनपाल पद्मगुप्त उव्वट कालिदास	महाराज भोजके दरबारी उद्भट विद्वान
बालक बालिका	पणिनि-पद्धतिका गान करनेवाले श्री बदरीनाथ वेदवेदाङ्ग महाविद्यालयके छात्र-छात्राएँ
राजपुरुष	वहाँके एक संस्कृतज्ञ पाणिनि-पद्धतिके प्रेमी राज-कर्मचारी
हरदत्तपण्डित	पदमञ्जरीकार पाणिनि-पद्धतिके मर्मज्ञ विद्वान्
भट्टोजिदीक्षित	सिद्धान्तकौमुदी प्रभृति प्रसिद्ध ग्रन्थप्रणेता दाक्षिणात्य महाविद्वान्
वरदराज	उनकी शिष्यपरम्पराके प्रसिद्ध विद्वान् लघुकौमुदीकर्ता
नागेशभट्ट	प्रसिद्ध दाक्षिणात्य महापण्डित शब्देन्दुशेखरादि ग्रन्थोंके प्रणेता
राजमन्त्री	दाक्षिणात्यराजाके प्रधानमन्त्री
चीरवात्सकी	रूस देशका प्रसिद्ध विद्वान्
फ्रांजवाप बोधलिङ्क मोक्षमूलर	जर्मनीके प्रसिद्ध विद्वान्
मोनियरविलियम	इंग्लैण्ड देशके लन्दन नगरके प्रसिद्ध विद्वान्
ह्विटनी	अमेरिकाके प्रसिद्ध विद्वान्
कीलहार्न वाकरनागर	जर्मनीके प्रख्यात पण्डितगण
मैग्डानल (मुग्धानल)	इंग्लैण्डके कैम्ब्रजनिवासी प्रसिद्ध विद्वान्

रेणु	फ्रांसके पेरिस नगरनिवासी प्रसिद्ध पण्डित
बालक बालिका	श्री ब० वे० वे० महाविद्यालयकी छात्र-छात्राएँ
भारतमाता	भारतराष्ट्रकी अधिष्ठात्री दिव्य शक्ति
वैदिकजी	श्री ब० वे० वे० महाविद्यालयके वैदिक पण्डित

अथ प्रथमोऽङ्कः

पहला दृश्य

प्रस्तावना

[दो बच्चे हाथ जोड़कर प्रार्थनारूपमें नान्दीपाठ करेंगे तदनन्तर ही सूत्रधारका प्रवेश होगा]

नान्दीपाठ—

(मालिनी छन्द)

हम सब निज खोये राज्यको पा गये हैं,
प्रतिदिन अब सारी सिद्धि भी पा रहे हैं।
प्रभुवर वह देंगे लुप्त थी जो बड़ाई,
प्रिय निज जनताको शीघ्र विद्या पढ़ाई ॥१॥

(भुजङ्गप्रयात छन्द)

चलाया उसीने यहाँ शब्द-विद्या,
जिसे है बढ़ाया बुधोंने सुहृद्या,
अहो प्रक्रमात् सूत्र-संख्या सजायी,
महर्षित्रयी को नमस्या करायी ॥२॥

सूत्रधार—बस, बस, अधिक काल-कला-हरणकारिणी अनल्प-जल्पना करना व्यर्थ है। अभूतपूर्व पाणिनिप्रशस्तिनाटक देखनेकी लालसासे बड़ी-बड़ी संख्यामें परिषत्सदस्य

उपस्थित हैं। अहा ! क्या कहना है ? जैसे आज स्वतन्त्र भारतमें अभूतपूर्व स्वतन्त्र संविधान तैयार हुआ है, वैसे ही कांग्रेसके असहयोग-आन्दोलन-युद्धमें एक वर्ष कारावासकी यन्त्रणा भुगतकर पण्डितराज, व्याख्यानवागीश, महामहाध्यापक श्रीगोपाल शास्त्री दर्शनकेशरीने सर्वतन्त्र स्वतन्त्र मुनिवर पाणिनिकी प्रशस्ति-वृद्धिके निमित्त अद्भुत अभिनयात्मक निबन्ध रूपमें अभूतपूर्व इस 'पाणिनिप्रशस्ति' नाटककी रचना भी की है। क्योंकि—

(मालिनी छन्द)

मुनि उस युगमें हा ! जो गया था हटाया,
'वह युग परतन्त्री आ गया था बलाया।
अब हम सब तो हैं शुद्ध सच्चे स्वतन्त्री,
जस बुध वह सच्चा था महर्षी स्वतन्त्री ॥३॥

अये ? मारिष ! मारिष ! कहाँ हो, कहाँ हो। जल्दी आ जाओ, जल्दी आ जाओ।

मारिष—(प्रवेश कर) हाँ, मैं आ गया, यह मैं आ गया। आपकी क्या आज्ञा है ?

सूत्रधार—अरे भाई ? तुम स्वतन्त्र नागरिकोंके स्वातन्त्र्यप्रिय इस स्वतन्त्र 'पाणिनिप्रशस्ति' नाटकका अभिनय करनेमें क्यों कालहरण कर रहे हो ? क्या बात है ?

महाशय ? महाशय ? मैं अकारण कोई बात नहीं कहता। सुनिये—आज हम भारतीयोंका यहाँ स्वातन्त्र्यदिवस-महोत्सव है। इस महोत्सवमें हम लोगों को अपार आनन्द मिलता है। आज स्वतन्त्र भारतमें प्रतिनगर, प्रतिग्राम, प्रति टोला-टपरी, यहाँतक की

प्रति झोपड़ीतक आज प्रभातफेरी हुई है। सभी स्वतन्त्रता-प्रेमी नागरिक, ग्रामीण अपने-अपने भवनों, गृहों और झोपड़ियोंपर राष्ट्रीय झण्डा फहरा रहे हैं। सभी बालक-बालिकाएँ राष्ट्रध्वज फहराते हुए उसी का गान करते हुए प्रत्येक गली कूचेतक घूम रहे हैं। उसीके देखनेमें मुझे कुछ देर हो गयी है।

सूत्रधार—शाबाश, शाबाश, खूब याद कराया, खूब याद कराया। तो भाई मारिष, तुम भीं अपने इस स्वतन्त्र पाणिनि-प्रशस्ति-अभिनयको इसी स्वतन्त्र राष्ट्रध्वज-गानसे ही प्रारम्भ करो।

मारिष—वाह महाशय, वाह, आपकी यह आज्ञा तो विल्लेके आगे शिक्का टूटकर गिरनेके समान ही है। जो रोगी चाहता है, वैद्यने भी वही पथ्य बताया है। यही तो हम लोग चाहते हैं। आओ ? बालक बालिकाओ ? आओ। हम लोग महाशयकी आज्ञासे एकत्र होकर राष्ट्रध्वजका गाना गायें।

[उसी समय कुछ अन्य, बालक-बालिकाएँ भी आ जाते हैं। सभी एक स्वरमें हारमोनियमपर संस्कृत छन्दमें गाते हैं]

बालक और बालिकाएँ—

उन्नयन् भारतस्याद्य भाग्योदये,
नव्य भव्याकृतिर्गीयमानोन्नतिः।
चित्रचक्राङ्कितो राजमुद्राङ्कितो,
धूयतां धूयतां भारतीयोध्वजः ॥४॥
उन्मदैः शासकैः पादघातैश्चिरम्,
बोधितः कोपितो देशकण्ठीरवः।

जृम्भते धीरगम्भीरनादैरसौ,
वन्द्यतां वन्द्यतां राष्ट्रभूमिध्वजः ॥५॥
गान्धिना भारतीयोन्नतैर्मानवै—
र्यैः श्रमः सञ्चितो विश्रुतोपक्रमः ।
वर्णयंस्तत्कथामद्भुतां वेल्लितैः,
राजतां राजतां राजमान्योध्वजः ॥६॥
यस्त्रिभिर्विश्वमूलैर्गुणै रञ्जितो,
विष्णुना किन्तु चक्रेण संरक्षितः
भारतीयैर्भृशं भूतये भावितो—
भ्राजतां भ्राजतां भारतीयोध्वजः ॥७॥
आहिमाद्रेरथाऽप्यासमुद्राच्चिरम् ,
पूर्वबङ्गादि गान्धारदेशावधिः ।
स्थापितो मानितो नन्दितो वन्दितो,
वन्द्यतां वन्द्यतां वन्दनीयोध्वजः ॥८॥

[मारिष इन पद्योंका हिन्दी अर्थ कर देगा][१]

---

१. अर्थ—सुनिये, इस गानेका संक्षिप्त भाव यह है:—यह भारतका राष्ट्रध्वज, जो भारतके भाग्योदयपर फहरा रहा है, जिसका भव्य आकार है, जो भारतकी उन्नतिका गान कर रहा है; वह चित्रचक्र द्वारा पूजित एवं राजमुद्रासे चिह्नित राष्ट्रध्वज सदा ही फहराया करे ॥१॥

उन्मत्त पूर्वशासकों द्वारा जो भारत रूपी शेर बहुत दिनोंतक ठोकर मार-मारकर जगाया गया है, वह आज जागकर क्रुद्ध होकर जोर-जोरसे दहाड़ रहा है । उसके राष्ट्रध्वजकी वन्दना करो ॥२॥

महात्मा गान्धीजी तथा भारतके उन्नत मानवगण एवं सुभाषचन्द्रबोस प्रभृति नेताओं द्वारा जो कांग्रेस-आन्दोलन चलाया गया था, उसकी अद्भुत

सूत्रधार—बस, बस, अब तो आप लोगोंका परमप्रिय गान समाप्त हुआ, अतः आप लोग मेरे पाणिनीयप्रशस्ति अभिनयका गुप्तचर-कृत्य बाहर जाकर करें।

मारिष—तो आप क्या चाहते हैं? साफ-साफ कहिये। हम लोग बालक हैं। आपका अभिप्राय नहीं समझ रहे हैं।

सूत्रधार—इसमें समझना क्या है? यही कि आजकल स्वतन्त्रता-के इस युगमें सभी जगह 'इतिपाणिनि' यह शब्द गूँज रहा है। इसका क्या अभिप्राय है? आप बाहर जाकर संस्कृत पढ़नेके साथ-साथ इसे ढूँढें। यही मेरा कहना है।

मारिष—चलो बालको, चलो। हम लोग महाशयजीकी आज्ञासे 'इतिपाणिनि' इस शब्दका अभिप्राय संस्कृत पढ़ते हुए ढूँढें।

[यह सुनकर सभी बालक-बालिकाएँ गोलाकार चक्कर बनाते हुए ताली बजा-बजाकर नाचते-नाचते हारमोनियमपर गान करते हुए निकल जाते हैं।]

गाथाको अपनी फरफराहटसे वर्णन करनेवाला यह राजमान्य ध्वज बराबर फहराता रहे ॥३॥

जो राष्ट्रध्वज सृष्टिके मूलभूत सत्व, रजस्, तमस् इन तीनों गुणोंसे युक्त है तथा अशोक-चक्रसे क्या मुक्त है? मानो विष्णु भगवान् द्वारा सुदर्शन चक्र-से सुरक्षित है। यों अपनी उन्नतिके लिए भारतीयों द्वारा अत्यन्त सम्मानित यह राष्ट्रध्वज सर्वदा ही प्रकाशित होता रहे ॥४॥

हिमालयसे दक्षिण समुद्रतक तथा पूर्व बङ्गालसे गान्धार देशतकके लिए स्थापित सम्मानित, अभिनन्दित, एवं अभिवन्दित यह राष्ट्रध्वज सदा ही वन्दित बना रहे ॥५॥

बालक बालिकाएँ[1]—

(गीतक छन्द)

नरनरा अये भवति गीतकम् ,
चलत बालकाः चलत बालकाः ।
पठत संस्कृतम् पठत संस्कृतम् ,
लिखत संस्कृतम् लिखत संस्कृतम् ।
वदत संस्कृतम् वदत संस्कृतम् ,
वदत संस्कृतम् ॥१॥

शृणुत संस्कृतं शृणुत संस्कृतम् ,
हसत संस्कृते हसत संस्कृते ।
भवतु भारतं विततसंस्कृतम्,
भवतु भारतं विततसंस्कृतम् ॥२॥

(इति प्रस्तावना)

प्रथम दृश्य समाप्त

---

१. अर्थ—चलो बालको, चलो बालको, संस्कृत पढ़ो संस्कृत पढ़ो। संस्कृत ही लिखा करो। संस्कृत ही लिखा करो। संस्कृत ही बोला करो, संस्कृत ही बोला करो ॥१॥

संस्कृत ही सुना करो संस्कृत ही सुना करो। संस्कृतमें ही हँसो, संस्कृत में ही हँसो, जिससे सारा भारत संस्कृतमय हो जाय, संस्कृतमय हो जाय।

दूसरा दृश्य

[ग्रामाध्यक्ष तथा महानन्दके परिषत्स्थविरका मार्ग में कहीं सम्मेलन हो जानेपर परस्पर संलाप]

ग्रामाध्यक्ष—(मन ही मन) अहो ? यह महानन्द सम्राट्के परिषत्स्थविर बड़े ही विशिष्ट विद्वान् हैं। नगरमें ऐसी प्रसिद्धि है। वह मेरे सौभाग्यसे इधर ही आ रहे हैं। तो इन्हीं-से पूछकर मैं 'इतिपाणिनि' शब्दका अर्थ समझ लूँ। ऐसा अवसर फिर कहाँ मिलेगा। (पास जाकर) अये परिषत्स्थविर महाराज ? मैं आपको प्रणाम करता हूँ।

परिषत्स्थविर—(हाथ उठाकर) आपका विजय हो।

ग्रामाध्यक्ष—अये परिषत्स्थविर महाराज ? मेरे भाग्यसे ही यहाँ आपके दर्शन हुए हैं। मेरा बहुत दिनोंका एक प्रश्न प्रष्टव्य है। आज आपके द्वारा उसका समाधान हो जायगा।

परिषत्स्थविर—हाँ, हाँ, तो यथेच्छ पूछिये कोई रुकावट नहीं है।

ग्रामाध्यक्ष—सुनिये, मैंने एक पारिषद्य संवादमें प्रतिवादीकी भूमिका ले रखी थी। वहाँ पूर्वपक्षीने मुझसे 'इति-पाणिनि' शब्दका अर्थ पूछा था। मैं उसका यथार्थ उत्तर न देसका था। अतः आप अपने मुखारविन्दसे मधुर शब्दों द्वारा इस समय उस शंकाका सुमधुर समाधान करें।

परिषत्स्थविर—अरे भाई ? यह शब्द तो 'अव्ययं विभक्ति समीप··' इस पाणिनि-सूत्रसे शब्दप्रादुर्भावके अर्थमें अव्ययीभाव समास करनेपर सिद्ध होता है। इसका अर्थ है 'पाणिनि शब्दका लोकमें प्रकाश है।' अर्थात् पाणिनि-जी ऐसे विद्वान् हैं कि वह जिस शब्दपर अपना मुहर लगा देते हैं, वह शब्द प्रामाणिक माना जाता है। वह

मुनिवर धन्य हैं। ऐसी चर्चा जगत्में सर्वत्र हो रही है। सारे संसारमें उनकी अद्भुत सूझ-बूझकी धूम मची हुई है। यही तो अर्थ है 'इतिपाणिनि' शब्दका।

ग्रामाध्यक्ष—वाह, वाह, आपने तो 'इतिपाणिनि' शब्दका अर्थ ऐसा स्पष्ट कर दिया कि मुझे जन्म भर नहीं भूल सकता। इसीसे तो विद्वानोंकी प्रशंसा 'विद्यावतां सकलमेव गिरां दवीयः' इत्यादि वाक्योंसे की जाती है। अब मैं इस शब्दका भाष्य अपने आप कर लूँगा। (कुछ रुककर) हाँ? यदि आपकी कृपा हो तो मैं अब अपना मार्ग ग्रहण करूँ।

परिषत्स्थविर—अरे भाई! मैं आपका एक और दूसरा प्रिय कार्य करना चाहता हूँ। यदि आप पाणिनिजीके प्रेमी हैं तो रास्तेका सौगात एक और लेते जाइये न।

ग्रामाध्यक्ष—यह तो आपकी बड़ी कृपा होगी। कृपा करनेमें पूछना क्या? यह तो लोकप्रसिद्धि है ही कि 'क्या नेकी करे पूछ-पूछ।'

परिषत्स्थविर—आज हम लोगोंका सुप्रभात है। सुना है कि सम्राट् महानन्दकी सभा में वही गान्धार देशके शलातुर ग्रामनिवासी, दाक्षीपुत्र, शालङ्कायनि, माङ्गलिक, आचार्य, सूक्ष्मेक्षिक, महावैयाकरण सूत्रकार पाणिनीजी परिषत्सदस्योंके समक्ष पधार रहे हैं।

ग्रामाध्यक्ष—किसलिए पधार रहे हैं? यह भी तो बताइये। आपके शब्द तो मुझे अमृतसे लग रहे हैं।

परिषत्स्थविर—इस महामुनिने शिवजीसे वर पाकर प्रखर बुद्धि हो जानेके कारण प्रायः पैंसठ महावैयाकरणोंके सम्मानार्ह चार सूत्र कम चार हजार सूत्र क्रमशः सप्रसङ्ग सजाया हुआ प्रत्येक अध्यायमें चार-चार पादवाला, आठ अध्याय-

का 'पाणिनीय शब्दानुशासन' नामक बड़ा ही सरल सुन्दर एक व्याकरण-ग्रन्थ लिखा है, जिसमें धातुपाठ, गणपाठ, परिभाषापाठ तथा लिङ्गानुशासन भी सम्मिलित हैं। उसे अकालक व्याकरण भी कहते हैं। क्योंकि उसमें कालकी परिभाषाका खण्डन है। उसे ही आज सभामें सदस्योंके समक्ष परीक्षार्थ तथा प्रचारार्थ आचार्यवर रखेंगे।

ग्रामाध्यक्ष—(प्रसन्न होकर) अहा हा ? आपने तो सचमुच मेरे कानोंमें अमृतकी वर्षा कर दी है। मुझे तो यह वृत्तान्त बड़ा ही आनन्द दे रहा है। अहो कितना बड़ा मेरा भाग्य है जो आज पाणिनिजीके दर्शन होंगे। अहो ? मैं धन्य हूँ, धन्य हूँ। (यह कहता हुआ ग्रामाध्यक्ष नाचने लगता है)

(ऊपरसे परदा गिरता है।)

दूसरा दृश्य समाप्त

तीसरा दृश्य

[गान्धारदेशीय वेशभूषामें पाणिनिजी मन्त्रिपरिवेष्टित सम्राट् महानन्दकी सभामें प्रवेश करेंगे। पहले वह राजद्वार-पर खड़े रहेंगे प्रतिहारी सूचित करेगा]

प्रतिहारी—(राजदरबारमें जाकर) महाराजकी विजय हो। महाराज ? गान्धारदेशीय विद्वान् महामुनि पाणिनिजी राजदबारमें उपस्थित होना चाहते हैं। महाराजकी क्या आज्ञा है !

महाराज—(उत्सुकतापूर्वक) तो शीघ्र उन्हें बड़े सम्मानके साथ भीतर लाओ।

प्रतिहारी—जैसी आज्ञा, [कहकर बाहर जाता है। बड़े आदरसे पाणिनि-जीको दरबारमें लाता है]

पाणिनि—विजयतां महाराजः (ऐसा कहते हैं)

[पाणिनि मुनिको देखकर सभी राजदरबारी सम्मानसे खड़े हो जाते हैं]

महानन्द—(उठकर) भारत देशका सम्राट् महानन्द महामुनिको नमस्कार करता है।

पाणिनि—स्वस्ति साम्राज्यंभौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं माहाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात् सार्व-भौमः सार्वायुष आन्तादापरार्द्धात् पृथिव्यै समुद्रपर्या-न्ताया एकराट् इति'।

महानन्द—महामुने ? आपने किस निमित्त इस मगधभूभागकी शोभा बढ़ायी है ? कैसे हम लोगोंको कृतार्थ किया है ?

पाणिनि—महाराज ? मैंने पहले तक्षशिलाकी चरणपरिषद्में संस्कृत पढ़ना आरम्भ किया। इसके पश्चात् यहाँ पुष्पपुरमें भगवान् वर्षदेवजीका अन्तेवासी होकर समस्त संस्कृतवाङ्मयका अध्ययन किया। तदनन्तर बड़े परिश्रम-से सारी पृथिवीका परिभ्रमण किया।

महानन्द—वाह, यह कितना बड़ा उद्योग है। हाँ तो इसके बाद ?

---

१. अर्थ—महाराजका कल्याण हो साम्राज्य, भौज्य, स्वाराज्य, वैराज्य पारमेष्ठ्य, राज्य, माहाराज्य ये सभी अधिपत्य महाराजके राज्यान्तर्गत हों। महाराज सार्वभौम सम्राट् सर्वदा बने रहें। महाराजके सर्वत्र अप्रतिहत प्रवेश रहे। सम्पूर्ण आयुष्यका महाराज उपभोग करें। परार्द्धपर्यन्त महाराजकी कीर्ति बनी रहे। समुद्र पर्यन्त पृथिवीका महाराज एकछत्र राज्य करें।

पाणिनि—लोकके उपयोगमें आनेवाले, भूगोल, शिक्षा, साहित्य इत्यादि विषयोंके तथा सामाजिक जीवनोपयोगी कृषि, वाणिज्य, व्यवसाय, सिक्का, नाप-तौल, उन्मान, प्रमाण परिभाषा-सम्बन्धी एवं सेना, शासन, राज्य, मन्त्री, सभा-समारोह, यज्ञ-याग, पूजा-पाठ, जप-तप, देव-दानव, रजक-रञ्जक, नर्तक-गायक, तक्षक-लौहकार, कुम्भकार, द्यूत-कार, खेल-तमाशा, व्याध-मृग, दवा-दर्पन, रोगी-वैद्य, साहु-खदुका, खरीद-बिक्री प्रभृति सभी विषयोंके शब्द राशियोंका—

महानन्द—(बीचमें ही) अहो, कितना आश्चर्यकारी यह बुद्धिका प्रकाश है। हाँ, तो इसके बाद ?

पाणिनि—विशेषकर जनपद-सम्बन्धी स्थानों, वैदिक शाखाओं, चरणों, गोत्रों, वंशोंके वाचक तथा सभी प्रकारके वैदिक शब्द-राशियोंका संग्रह करके यह 'शब्दानुशासन' शास्त्र चार सूत्र कम चार हजार सूत्रोंका क्रमिक उपन्यास करके लक्ष्य-लक्षणात्मक उत्सर्ग-अपवाद रूपसे द्विजत्व प्रदान करनेका साँचा स्वरूप आर्यत्वका संवादक सभी लोक व्यवहारका पिटारा अत्यन्त संक्षिप्त सर्वार्थपूर्ण लिखकर तैयार किया है।

महानन्द—अहो ? आपने तो अद्भुत कार्य कर दिखाया है। हाँ तो इसके बाद ?

पाणिनि—और भी महाराज, जैसे इस समय संस्कृतभाषा राष्ट्र-भाषा (लोकभाषा) और राजभाषा बनी हुई है, उसी प्रकार मैंने दूराद्धूते च ८।२।८४, विभाषा पृष्टप्रतिवचने हेः ८।२।९३, आम्रेडितं भर्त्सने च ८।२।९५, इत्यादि स्वरोंके प्रकाशक सूत्र बनाये हैं।

महानन्द—अहो ? आपने तो—

(हरिगीतिका छन्द)

अज्ञानतम अन्धे जनोंको ज्ञान-अञ्जन दे दिया,
बस नेत्र उनका दिव्य दृष्टीमय सदाको कर दिया।
देखो भला अबतक किया किसने यहाँ इस रूप में,
जो शब्द-शास्त्र अगाध सागरको भरा हो कूपमें।

पाणिनि—महाराज अधिक क्या कहूँ, थोड़ेमें सुनिये—

(शार्दूल विक्रीडित छन्द)

संज्ञा-सूत्र-समूह-लक्षण लिखा है आद्य अध्यायमें,
दो पादों तक तो समास चलता है दूसरे अध्यायमें।
आते सूत्र विभक्ति-बोधक उसीके तीसरे पादमें,
'एकत्त्वं' 'सनपुंसकं' प्रकृतिके आदेश लुक चारमें।
धातोः प्रत्यय तद्विकार करता है तीसरा अध्याय भी,
टाप्-ङीप-स्त्रीत्वविधानयुक्त लखिये हैं तूर्य अध्याय भी।
चौथेसे पुनि पञ्चमान्त चलती है ताद्धिती प्रक्रिया;
वे भी प्रत्यय हैं समासविधिकी पञ्चान्तिमी प्रक्रिया॥

महानन्द—यह तो पाण्डित्यकी पराकाष्ठा ही है। हाँ तो इसके आगे कहिए—

पाणिनि—

(शार्दूल विक्रीडित छन्द)

षष्ठे द्वित्व तथा प्रसारण क्रिया सन्धि-स्वर-प्रक्रिया,
दो पादों तक है पुनः चल पड़ा लुक तीसरी प्रक्रिया।

चौथेसे वह अङ्गकार्य चलता है सप्तमाध्याय ले,
दीर्घाऽसिद्धविधी भसंज्ञकविधी षष्ठान्तिमें पाद ले।
प्रत्यादेश-नुमादि-कार्य 'दिवऔत' हैं सप्तमाद्यांघ्रिमें,
वृद्धीट्कृत्य सुबन्तसाधन-विधि प्रायः द्वितीयांघ्रिमें।
आदैजादिक-वृद्धि-कार्य-गुण भी द्विष्ठ क्रिया त्र्यंघ्रिमें,
'ह्रस्वोणौ' उपधादि कार्य सब हैं अभ्यास सप्तान्तिमे॥

महानन्द—सूत्रोंके सजानेका क्रम भी प्रशंसनीय है। हाँ? तो इसके आगे—

पाणिनि—

(शार्दूल विक्रीडित छन्द)

आद्येऽष्टके पदाधिकृति जो जाती तृतीयांघ्रि ले,
मूर्धन्य ष-ण-कार्य चार तक है हल्-सन्धि अन्तांघ्रि ले।
त्रैपादी बस है असिद्ध बनती अष्टान्तिमा पूर्वमें,
यों उत्सर्ग तथाऽपवाद विधिसे है प्रक्रिया सर्वमें।
सारी व्याकरण-क्रिया कह गया देखें जरा ध्यानसे,
आश्चर्यान्वित हो रहे बुध सभी जो देखते ज्ञान से।
हो जाती अनुवृत्ति औ अधिकृतीसे सूत्रवृत्ती सभी,
सूत्रोंके क्रमबद्धसे कर दिया है लक्ष्यसिद्धी सभी॥

महानन्द—वाह, कैसा चमत्कार है? आपने तो कमाल कर दिया है।

(वंशस्थ छन्द)

धोके सभीके मल शब्द-वारिसे,
वाणी बना दी विमला परिष्कृता ।
अज्ञानका ध्वान्त विनष्ट हो गया,
मानो मिली सूत्र-शशी-सुरश्मिता ॥

पाणिनि—महाराज, रहस्य यह है कि समन्वयबुद्धिसे मैंने सभी आचार्योंके सिद्धान्तोंकी रक्षा की है । व्युत्पन्न, अव्युत्पन्न, जाति, व्यक्ति इत्यादि शब्द-भेद-पक्षोंको भी बारीकीसे बताया है । देखिए:—
पारस्करप्रभृतीनि च संज्ञायाम् ६।१।१५७, उणादयो बहुलम् ३।३।१, जात्याख्यायामेकस्मिन्बहुवचनमन्यतरस्याम् १।२।५८, सरूपाणामेकशेषएकविभक्तौ १।२।६४ इत्यादि सूत्रोंकी रचना ही जागरूक प्रमाण है । लौकिक वैदिक सूत्रसमूहोंके साथ-साथ गणपाठ, परिभाषापाठ, लिङ्गानुशासन तथा द्वीप-द्वीपान्तर्गत सभी शब्द-राशियोंकी सिद्धिके निमित्त दो हजार धातुओंका संग्रह भी 'धातुपाठ' के नामसे कर दिया है ।

महानन्द—आपकी सूक्ष्मेक्षिका सराहने योग्य है । हाँ ? तो आगे—

पाणिनि—महाराज, अन्तमें यही कहना है कि यों 'पञ्चपाठी' इस संज्ञासे प्रसिद्ध सर्वाङ्गपूर्ण इस ग्रन्थरत्नका अध्ययनाध्यापन क्रमसे ही होने पर सभी सुविधाएँ मिलती हैं । यही मेरा हृदय है । और यही इस ग्रन्थरत्नका मर्म है ।

(वसन्त तिलका छन्द)

मैंने किया तप परिश्रम सूत्रमें जो,
संक्षेप लाघव तथा क्रमयोगमें जो ।

जो विज्ञ शिष्य यह मर्म विचार लेंगे,
वे पाणिनीय पथके सब लाभ लेंगे ॥

महानन्द—अहो आपने तो सचमुच सागरको गागरमें भर दिया है। मैं तो आपके इस ज्ञानगरिमासे चमत्कृत हो उठा हूँ। अहो ? ऐसे ग्रन्थरत्नकी क्या परीक्षा ? क्या सूर्य भी दीपकसे देखा जाता है ? हाँ ऐसे ग्रन्थरत्नका प्रचार-विधान जो मेरे हाथमें आया है यह मेरा बड़ा सौभाग्य है। (मन्त्रीसे) अये मन्त्रिन् ? इस ग्रन्थकी बहुत-सी—प्रतिलिपियाँ कराकर सर्वत्र साम्राज्यभरकी शिक्षा-संस्थाओंमें भिजवानेका तत्काल प्रबन्ध कराइये। साथ ही सर्वत्र साम्राज्यमें यह राज-घोषणा करा दीजिये कि इस ग्रन्थरत्नके सर्वाङ्गपूर्ण अध्येता विद्वान् एक सहस्र १०००) स्वर्णमुद्राओंसे पुरस्कृत होकर धर्म्योपहारके भागी बनेंगे।

और सुनिये, यह महामुनि श्रीपाणिनिजीके लिए एक सहस्र स्वर्णमुद्राओंका -धर्म्योपहार उपहृत करके इनका सत्कार कीजिये।

सभामें जयध्वनिकी गूँज हो रही है :—

जय हो पाणिनिजीकी। जय हो महाराजकी।
दोनोंपर पुष्पवृष्टि हो रही है।

(परदा गिरता है)

तीसरा दृश्य समाप्त

इति प्रथमोऽङ्कः

अथ द्वितीयोऽङ्कः

चौथा दृश्य (शुद्ध विष्कम्भ)

[सुन्दरक और मुकुर नामके दो भृत्य परस्पर संलाप करते हुए प्रवेश करते हैं]

सुन्दरक—अहो भैया मुकुर, तुम तो यथार्थ नामा मुकुर हो। सभीका फोटो अपनेमें ले लेते हो।

मुकुर—क्यों नहीं, जब मैं ठीक-ठीक मुकुर हूँ तो अवश्य ही दूसरेका फोटो अपनेमें भरूँगा और सभीको दिखाऊँगा ही।

सुन्दरक—तो मित्र, कुछ अपनी करामात दिखाओ, जिससे मेरे कानकी खुजली दूर हो।

मुकुर—तो भाई, तुम अपने कानरूपी जलेबीको मेरे सामने परोसो। (सुनो) आज मौर्यवंशीय सम्राट् चन्द्रगुप्तकी सभामें महाविद्वान् कात्यायन—जिनका दूसरा नाम वररुचि श्रुतिधर है—पधार रहे हैं।

सुन्दरक—अरे भाई, उनका पूरा परिचय दो।

मुकुर—अजी, वह दक्षिण देशकी कौशाम्बी नामक नगरीके निवासी हैं, उनकी माताका नाम वसुदत्ता है, पिताका सोमदत्त है। उन्होंने पाणिनिजीकी अष्टाध्यायीपर वार्तिक ग्रन्थ लिखा है। अब तुम्हारा पेट भरा ?

सुन्दरक—अभी कहाँ पेट भरा। वह क्यों आ रहे हैं ? यह भी तो बताओ।

मुकुर—वाह जी ? तुम तो सभी रहस्य जानना चाहते हो। मैं मुकुर भी हूँ तो राजपुरुष भी हूँ। यों ही सभी रहस्य दूसरेको नहीं बता सकता।

सुन्दरक—वाह भाई वाह । क्या तुम मुझे भी दूसरा समझते हो । मैं तो अपने मुकुर भाईकी उसी मुकुरताकी प्रशंसा करूँगा जो अपने प्रतिबिम्बको सबके आगे बिखेर देगा ।

मुकुर—अच्छा तुम तो मुझे चारों ओरसे जकड़ रहे हो ! तो क्या करूँ ? कोई गति नहीं है । देखो यह रहस्य है । कहीं उनके आनेसे पहले ही इसे मत बक देना ।

सुन्दरक—तो क्या तुम मुझे स्त्री समझते हो, जिसके पेटमें बातें नहीं पचतीं । कहो, कहो, मैं तो इसे ऐसे छिपा दूँगा कि मेरा कानतक इसे नहीं सुन सकेगा ।

मुकुर—जब ऐसी बात है तो सुनो—वह कात्यायन देव पाणिनिजीके प्रभावसे प्रेरित होकर उनके चार हजार सूत्रोंपर चार हजार दो सौ तिरसठ वार्तिकोंकी रचना की है । यों पाणिनिजीके शब्दानुशासनरूपी शशीको वार्तिक रूपी ताराओंसे विभूषित किया है । उसीकी आज राजसभामें प्रशंसा करते हुए पाणिनिजीपर अपनी अटूट श्रद्धाभक्ति प्रकट करेंगे ।

सुन्दरक—शाबाश भाई मुकुर, शाबाश ! तुमने तो सचमुच अपनी आदर्श मुकुरता स्पष्ट प्रकट कर दी है । अतः तुम सर्वथा धन्यवादके पात्र हो । अच्छा तो अब हम लोगोंका अपने कर्तव्य कर्मोंके करनेका समय भी हो चला है । अतः चलो चलें अब अपनी ड्यूटीपर भी डट जाया जाय ।

[दोनों दो तरफ चले जाते हैं].

(परदा गिरता है)

चौथा दृश्य समाप्त

पाँचवाँ दृश्य

[पुष्पपुर (पटना)में चन्द्रगुप्त मौर्यकी मन्त्रिमण्डल तथा विद्वद्वृन्द-
विभूषित राजसभामें दाक्षिणात्य वेशधारी वररुचि श्रुतधर
(कात्यायनदेव)का प्रवेश]

प्रतिहारी—(प्रवेश करके) महाराजकी जय हो। महाराज, वही दक्षिणी पण्डित कात्यायनजी महाराजके दर्शनार्थ राजद्वारकी शोभा बढ़ा रहे हैं।

चन्द्रगुप्त—तो उन्हें सभामें शीघ्र ले आओ।

[प्रतिहारी और कात्यायन साथ आते हैं]

कात्यायन—(सभामें प्रवेशकर) विजयतां महाराजः।

चन्द्रगुप्त—(उठकर) मौर्य सम्राट् चन्द्रगुप्त आपका अभिनन्दन करता है।

कात्यायन—

संस्कृताभ्युदयङ्कुर्वंस्तद्विदश्च समर्चयन्।
चिरं जीव्याः महाराज पुत्रपौत्रैस्सबान्धवैः॥

[कात्यायनदेव हिन्दी कविता भी पढ़ेंगे और महाराजको पुष्प भेंट करेंगे]

जैसे करते आप हैं संस्कृतका उत्थान।
संस्कृतसेवी विज्ञका वैसे ही सम्मान॥
सदा पुत्रपौत्रादिकी सुख सङ्गतिके साथ।
आप दीर्घजीवी रहें सभी नवावें माथ॥

चन्द्रगुप्त—(उठकर सभाको सम्बोधित करते हुए) सभासदो, आप ध्यान दें। यह कात्यायनदेव बड़े विद्वान् हैं। मुझसे गत दिन मिल चुके हैं। इन्होंने अपनी विद्वत्तासे राष्ट्रकी बड़ी सेवा की है।

(शार्दूल विक्रीडित छन्द)

की है वार्तिककी विचित्र रचना सूत्र-क्रियावर्त्ममना,
उक्तानुक्तदुरुक्त सूत्र जिससे हैं पूर्ण सर्वात्मना।
ऐसे ही करके सुकाव्य-रचना साहित्यके मार्गमें,
हैं ये पाणिनिके समान कवि भी औ शब्दकोशार्थमें।
स्वर्गारोहण काव्यको रच धराकी स्वर्ग-सी रोचना,
पा ली है कविकीर्ति भी वररुचीके नामसे शोभना।
ये कात्यायन नामसे वररुचीके नामसे भी तथा,
हैं प्रख्यात यहाँ उपस्थित भले देखें सभी सर्वथा॥

सभासद्वृन्द? इस महाविद्वान्की राष्ट्रसेवाको समझें। इसलिए मैंने इन्हें राजसभामें अपना वक्तव्य देनेको कहा है। (कात्यायनजीके अभिमुख होकर) अयि विद्वन्, आप अपना वक्तव्य सभाके समक्ष उपस्थित करें। यह मेरी आपसे अभ्यर्थना है।

[महाराज ऐसा कहकर बैठ जाते हैं और कात्यायन जी अपना वक्तव्य प्रारम्भ करते हैं]

कात्यायन—हे हे शब्दशास्त्रके मर्मज्ञ विद्वानो तथा नगरिको! देशी, विदेशी राजदूत एवं व्यापारिक वर्ग? मन्त्रिवृन्द! राजपुरुषवर्ग एवं आर्य महिलावर्ग! आप सभीकी सेवामें मेरा निवेदन है कि यद्यपि महाराजकी आज्ञा पाकर मेरा ऊत्साह दुगुना हो गया है, तथापि विद्वानोंसे विभूषित इस राजसभामें संक्षेपसे ही अपना विचार रखकर विश्राम लूँगा।

[यह कहकर कात्यायनजी रुक जाते हैं]

चन्द्रगुप्त—देखिये सभासद्वृन्द ? इस विद्वान्के व्याख्यान-शैलीको। (कात्यायनजीकी ओर देखकर) हाँ तो आप आगे अपना वक्तव्य प्रारम्भ करें।

कात्यायन—मैं दक्षिण देशका निवासी होता हुआ भी गान्धार देशमें प्रादुर्भूत शालातुर ग्रामाभिजन आचार्य पाणिनिकी अद्भुत अष्टाध्यायी शब्दानुशासनको देख उसके गुणोंसे आकृष्ट होकर नितान्त विमुग्ध हो गया हूँ। मैंने उस अष्टाध्यायी शब्दानुशासनका परिशीलन करके दृढ़ विचार विमर्शके बाद स्वयं तथा दूसरोंके द्वारा उठायी गयी शंकाओंके समाधानकी दृष्टिसे चार हजार दो सौ तिरसठ ४२६३ वार्तिकोंके द्वारा उसे विभूषित एवं ताराओंसे वेष्टित चन्द्रमाके सदृश प्रतिमण्डिता कर दिया है। "भगवतः पाणिनेः सिद्धम्" यही मेरा अन्तिम वार्तिक है। अधिक मैं क्या कहूँ, पाणिनिजीकी अष्टाध्यायीके प्रभावसे प्रवाहित एवं उद्वेलित मेरे हृदयका स्रग्विणी-गान आप लोग सुनें :—

[यह कहकर वह नाचते हुए गाते हैं]

(स्रग्विणी छन्द)

मानवीयान्तिमा जो प्रभा हो सके,
वो लखाती यहाँ पाणिनीयाष्टके।
हाँ कहेंगे विदेशी सुधी जो सही,
चीनवासीत्सिंगादि बसेंगे कहीं।

(वसंततिलका छन्द)

देखो धरापर हुआ मुनि पाणिनीका,
जो शब्दशास्त्र वह अद्भुत कार्य नीका।

देखी भली यदि कहीं मति तो बतावें;
जो अन्तिमा परिणती नरकी कहावें ।

(शार्दुल विक्रीडित छन्द)

मैंने तो कुछ ना किया, मुनि किये, जो सूत्र में थी कमी-
वृद्धि थी यदि अर्थ था नहि खुला थी शब्द की जो कमी ।
पूर्ती की उसकी कहीं कह चला सूत्रार्थ की प्रक्रिया-
उक्तानुक्तदुरुक्त सूत्र भरता है वार्तिकी प्रक्रिया ।

मैं ही नहीं जो कोई भी पाणिनिजीकि अष्टाध्यायीमें अन्तः-प्रवेश करेगा वह इसी प्रकार उसके प्रभाव-प्रवाहसे प्रवाहित एवम् उद्वेलित होकर नृत्य करता हुआ स्रग्विणी-गान करेगा ही । सुनिये :—

[पुनः पूर्व छन्द को दुहराते हैं]

(स्रग्विणी छन्द)

मानवीयान्तिमा जो प्रभा हो सके-
वो लखाती यहीं पाणिनीयाष्टके ।
हाँ कहेंगे विदेशी सुधी जो सही-
चीनवासीत्सिंगादि बसेंगे कहीं ॥

[यह गाकर कात्यायनजी बैठ जाते हैं]

चन्द्रगुप्त—(उठकर) सभासद् वृन्द ? आप लोगोंने इस महा विद्वान्‌की राष्ट्र सेवाके साथ-साथ पाणिनि-प्रशस्तिमें श्रद्धा-भक्तिको भी देखा । ऐसे ही सज्जन दूसरेकी प्रशंसा

करके अपनेको सन्तुष्ट करते हैं। किसी कविने अच्छा कहा है;—

कायामें मनमें तथा वचनमें होती सुधा-सी भरी,
लोगोंको उपकारकी बस सदा शिक्षा सिखावें भली।
ऐसे सज्जन सन्त आज कितने जो दीख जाते कभी,
अन्योंके गुण दिव्य वर्णन करें होवें सुखी आप भी ॥

इस महा विद्वान्‌ने दूसरेकी प्रशंसा करके ही अपनी ख्याति पायी है। योंही अपना ग्रन्थ-प्रणयन भी दूसरेके ग्रन्थको पूर्ण करनेकी बुद्धिसे किया है। इस प्रकार इस विद्वान्‌ने अपने कृत्यसे राष्ट्रके चरित्रोन्नयनमें कैसी बुद्धिमत्ता दिखायी है। यह हम लोगोंके द्वारा प्रशंसाके पात्र हैं। अतः आप लोग सभी तीन बार उच्चैः स्वरसे बोलें— कात्यायनदेवकी जय, कात्यायन देवकी जय, कात्यायनदेवकी जय।

(परदा गिरता है)

पाँचवाँ दृश्य समाप्त

इति द्वितीयोऽङ्कः

अथ तृतीयोऽङ्कः

छठा दृश्य

[पुष्पपुरमें शुङ्गसेनापति सम्राट् पुष्यमित्रकी आज्ञा पाकर उनका परिषत्स्थविर रैवतक परिषद् सजानेके लिए शीघ्रतासे जा रहा है। मार्गमें मिलनेवाले भल्लूकभट्टसे बाततक नहीं करता है। पीछे उन दोनोंमें जमकर बातें होती हैं। जिससे पतञ्जलिदेव और उनके भाष्यका परिचय मिलता है]।

रैवतक—(रङ्गमञ्चपर आकर) अहो, मुझे शुङ्गसेनापति सम्राट् पुष्यमित्रदेवने आज्ञा दी है कि रैवतक, तुम परिषद्-मण्डलको खूब सजाओ। आज पतञ्जलिमुनि परिषद्में पधार रहे हैं। अतः आज मेरा अहोभाग्य है कि मैं राजाज्ञा-पालनके साथ-साथ पतञ्जलिमुनिकी सेवामें लग रहा हूँ। सो जल्दी-जल्दी वहाँ जाऊँ।

[यों जल्दी-जल्दी चलता है। मार्गमें मिलनेवाले भल्लूकभट्टको देखता भी नहीं है]।

भल्लूकभट्ट—(मार्गमें जाते हुए रैवतकको रोककर) क्यों रैवतक, क्यों इतनी जल्दी-जल्दी भागे जा रहे हो? मार्गमें खड़े मुझे देखतेतक नहीं हो। इतनी सरपट चाल की है कि तुम्हारा पैर पृथ्वीपर पड़ता ही नहीं है। तुम तो बिलकुल आकाशमें ही उड़े जा रहे हो।

रैवतक—अये भल्लूकभट्ट भाई, आपको प्रणाम है, प्रणाम है।

[ऐसा कहता हुआ जल्दी-जल्दी आगे बढ़ता है]

भल्लूकभट्ट—(पुनः रोककर) क्यों रैवतक ? क्या तुमको जल्दी पड़ी है कि आशीर्वाद तक नहीं ले रहे हो ।

[भल्लुकभट्ट रोकता है और रैवतक चलता ही चला जाता है । यों दोनों अपने अभिनयसे लोगोंको हँसाते हैं] ।

रैवतक—अरे भाई भल्लूकभट्ट ? विघ्न मत करो ! मैंने तो जबसे पतञ्जलिदेवका नाम सुना है, तभीसे आनन्दमग्न हूँ । मुझे आगे-पीछे कुछ नहीं सूझता । कहिये ? आप क्या कहना चाहते हैं ।

भल्लूकभट्ट—क्या कहूँ तुम तो सुनते ही नहीं । पतञ्जलिदेवका क्या नाम ले रहे हो ! स्पष्ट कहो न, हम लोग भी पतञ्जलिदेवके भक्त हैं ।

रैवतक—तब तो आपको भी यह कर्णामृत ही लगेगा । तब क्या कहना है । तब तो मुझे कोई जल्दी-जल्दी नहीं है । सुनिये आप कान देकर ।

[भल्लूकभट्ट उनके मुँहके सामने अपना कान दे देता है तो भी वह चिल्ला-चिल्लाकर कहता है] ।

आज शुङ्गसेनापति सम्राट् पुष्यमित्रकी सभामें पतञ्जलिमुनि पधार रहे हैं । इसी कारण सभा सजानेके लिए मैं जल्दी-जल्दी जा रहा हूँ । अब आपने सुना ?

भल्लूकभट्ट—अरे, वह तो विश्वविख्यात विद्वान् हैं । उनके विषयमें क्या कहना है । उनके विषयमें तो सभी नगरिक एक बड़ी अच्छी कविता कहा करते हैं । क्या तुम नहीं जानते ?

रैवतक—ना, महाराज, मैं तो नहीं जानता ।

भल्लूकभट्ट—अच्छा तो सुनो :—

(वंशस्थ छन्द)

लखा जभी पाणिनि पद्धती भली,
रचा महाभाष्य विमुग्ध हो तभी।
हुए तभी मुग्ध मुनी पतञ्जली,
करें बड़ाई इस भाष्यकी सभी॥

मैंने भी पहलेसे ही उनकी वड़ी वड़ाई सुन रखी है तुम उन्हींकी सेवामें जा रहे हो, तो जाओ, भाई जाओ। तुम्हारा मार्ग कल्याणकारी हो। मैं भी अपना रास्ता नापता हूँ।

[भल्लूकभट्ट चला जाता है]

रैवतक—(मन ही मन) अहो! ऐसे प्रख्यात प्रभाववाले पतञ्जलि मुनि हैं, तो अच्छा, आज उनको देखकर मेरे भी ये नेत्र सफल होंगे। पहले राजाज्ञा-पालन करनेसे पतञ्जलिदेव-की सेवा हो जाती है तो 'एक पन्थ दो काज'की कहावत चरितार्थ हो जायेगी। इसलिए मैं राजसभाको ऐसी सजाऊँ कि मेरी सभा सजानेकी कला देखकर हठात लोग मेरी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगें।

[यह कहकर सभामें जहाँ-तहाँ चित्र लगता है और दूसरी सजानेवाली वस्तुओंको यथास्थान लगाता हुआ सभामण्डलको सुन्दर बनाकर चला जाता है]।

(परदा गिरता है)

छठा दृश्य समाप्त

सातवाँ दृश्य

[पुष्पपुरमें अपने मन्त्रिमण्डल तथा सभासदोंके साथ सिंहासनासीन शुङ्गसेनापति सम्राट् पुष्यमित्रका रङ्गमंचपर प्रवेश परदा उठाकर होगा]

प्रतिहारी—विजयतां महाराजः। महाराज! पतञ्जलिमुनि महाराजके दर्शनकी इच्छासे द्वारपर विराजमान हैं।

पुष्यमित्र—तो तत्काल उन्हें सभामें ले आओ।

प्रतिहारी—जैसी आज्ञा महाराजकी।

[ऐसा कहकर चला जाता है, और बाहर पर्देमें खड़े पतञ्जलिमुनिके समीप आकर चलनेके लिए कहता है]।

चलिये सरकार, महाराज आपको दरबारमें बुला रहे हैं।

[पतञ्जलिमुनि उसके साथ सभामें प्रवेश करते है]

पतञ्जलि—(सभामें प्रवेश कर) विजयतां महाराजः।

पुष्यमित्र—(उठकर) यह शुङ्गसेनापति भारत सम्राट् पुष्पमित्र पण्डितराजको प्रणाम करता है।

पतञ्जलि—

(अनुष्टुप छन्द)

भारतीमुन्नयन्देवः संजीव्याच्छरदां शतम्।
प्रजाः सम्पालयन् सम्राट् भूयश्च शरदां शतम्॥

(दोहा)

करते संस्कृत उन्नती चिर जीवें सरकार।
प्रजा पालि पुनि सैकड़ों वर्षोंके भी पार॥

पुष्यमित्र—(उठकर) किस प्रसंगसे सभासदोंके साथ मुझे आज आपने कृतार्थ किया है ? सारी सभा आपकी अमृत-वाणी सुननेकी प्रतीक्षा कर रही है।

पतञ्जलि—जब महाराजकी आज्ञा है, तब मैं अवश्य अपना हार्दिक विचार प्रकाशित करूँगा। (सभाकी ओर देखकर) हे विद्वानो ? महाराजकी इस सभामें राजनीतिके बीहड़ चक्रोंसे परिचित बड़े-बड़े विद्वान् बैठे हैं। वे लोग सब जानते हैं कि राजनीतिज्ञोंका अधिकतर समय इसी उधेड़-बुनमें बीतता है कि इसे कैसे गिराया जाय और उसे कैसे उठाया जाय इत्यादि। किसी कविने राजनीतिका ठीक स्वरूप बताया है

(उपजाति छन्द)

सच्ची कहे झूठ कहे कभी वही,
कड़ी कभी कोमलवादिनी वही।
दानी बड़ी लोभकरी तथा वही,
हिंसाकरी और दयालु भी वही।
करे सदा खर्च धनादि की वही,
तथा कमाई करती धनी वही।
कहूँ कथा क्या सच बात है यही,
वाराङ्गना नीति नरेशकी सही ॥

मैंने शुङ्गसेनापति सम्राट् पुष्यमित्रके धर्मकार्य तथा राज-कार्य करते हुए भी आज भगवान् पाणिनि आचार्यका 'अष्टक शब्दानुशासन' जो बड़ा ही सुविहित पाणिनीय व्याकरण कहा जाता है—उसका परिशीलन करके उसके

गुणोंसे विमुग्ध हूँ। मैंने कात्यायनदेवके वार्तिकोंके साथ-साथ उसपर छत्तीस आह्निकका महाभाष्य लिखा है। उसे ही परीक्षार्थ तथा प्रचारार्थ सम्राट्की सभामें आज उपस्थित कर रहा हूँ।

[उच्च करतल ध्वनि होती है]

इस महाभाष्यमें मैंने व्याकरणशास्त्रके प्रवर्तक तथा सूक्ष्मेक्षिक माङ्गलिक आचार्य पाणिनिजीकी सभी गूढ़ भावनाओंका विशद विवरण दिया है। अधिक क्या कहना है। थोड़ेमें आपलोगोंसे यही निवेदन है कि :—

(उपजाति छन्द)

जहाँ नहीं थे गुरु इन्द्र शिक्षणे,
समर्थ ले लेकर शब्दसः कभी।
वहीं किया संग्रह लक्ष्य-लक्षणों—
का खूब सच्चा सुनिये क्रमात् सभी॥

इसलिए तो मैं पाणिनिजीका भक्त हूँ कि जहाँ वृहस्पतिजी भी इन्द्रके लिए पदशः प्रयोगोंको सिखानेमें समर्थ न हो सके; वहाँ ही पाणिनिजी लक्ष्य लक्षणोंके संग्रह द्वारा सभी प्रयोगोंकी सिद्धि कर दी। अब आप लोग मेरे भाष्यकी विशेषताको देखें :—

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सूत्रोंके बदले तथा निजपदोंकी सूत्र सादृश्यसे।
व्याख्याकी यह रीति भाष्य लिखनेकी है चली वेदसे॥

मध्ये वार्तिकराजि रञ्जित किया पाया जहाँ है कहीं ।
मैंने पाणिनि-सूत्रबद्ध पदके गूढ़ार्थ खोला सही ॥

पुष्यमित्र—(खड़े होकर) वाह, तो मैं धन्य हूँ। जिसकी राजपरिषद्में पतञ्जलि जैसे महा विद्वान् अपना ग्रन्थ परीक्षार्थ एवं प्रचारार्थ रखते हैं। इसकी परीक्षा तो वहाँ ही सफल हो जाती है, जब उस अनादि अनन्त ब्रह्मके निःश्वासरूप वेदके समान आनुपूर्वीविशिष्ट पाणिनिकी अष्टाध्यायी शब्दानुशानपर अविच्छिन्न महाभाष्य छत्तीस आह्निकका पूर्णरूपसे सम्पन्न कर दिया जाता है, और सभी विद्वत्समाज नतमस्तक होकर उसे स्वीकार कर लेता है। मैं तो आपको महामन्त्री पाकर ही अपनेको भाग्यवान् समझ रहा था। आज इस ग्रन्थरत्नको पाकर तो मेरे आनन्दकी सीमा ही नहीं है। मैं तो आपहीको आदेश-पत्र द्वारा राजाज्ञा प्रदान करता हूँ कि इस ग्रन्थरत्नकी बहुतसी प्रतिलिपियाँ कराकर सम्राज्य भरमें तथा शिक्षा-संस्थाओंमें भिजवाइये, और आजसे पाणिनीय व्याकरण 'त्रिमुनिव्याकरण' इस नामसे विख्यात होगा, ऐसी मेरी राजाज्ञा है, क्योंकि वंश दो प्रकारसे माना जाता है। एक विद्यावंश, दूसरा गोत्रवंश। सो यह विद्यावंशकी परम्परा है।

पाणिनिजीकी कमी पूर्ति कात्यायनदेवने की है। उनकी पूर्ति आपने की है, और इस व्याकरणमें "यथोत्तरं मुनीनाम्प्रामाण्यम्" की प्रथा रहेगी। और साम्राज्यमें यह घोषणा करा दें कि जो कोई पतञ्जलि-महाभाष्या-वगाहनपूर्वक पाणिनि-व्याकरणपर अपना पूर्ण पाण्डित्य

प्रकट करेगा उसे एक सहस्र स्वर्णमुद्राका धर्म्य पुरस्कार राज्यकी ओरसे उपहार मिलेगा।

[सम्राट्की यह राजघोषणा सुनते ही सहसा पतञ्जलिमुनि तथा शुङ्ग-सेनापति सम्राट् पुष्यमित्रकी जय जयकारकी ध्वनिसे पूरी रंगशाला गूँज उठती है]।

(परदा गिरता है)

सातवाँ दृश्य समाप्त

इति तृतीयोऽङ्कः

अथ चतुर्थोऽङ्कः

आठवाँ दृश्य

[हिमालयपर अलकनन्दा नदीके किनारे तप्तकुण्डसे माण्डित तपोवनके समीप अपने आश्रममें बैठे सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार प्रभृति सिद्धगण अकस्मात् उपस्थित नन्दिकेश्वरजीको देखकर परस्पर बातें करते हैं।]

सनक—हे भइया, हम लोगोंका अहोभाग्य है कि यात्राप्रसंगसे यहाँ नन्दिकेश्वरजी पधार रहे हैं, तो मैं पाणीनि मुनिकी अष्टाध्यायी (अष्टक शब्दानुशासन)के सम्बन्धमें जो अपनी चिरसञ्चित मनोगत जिज्ञासा है, उसे पूछता हूँ, आप लोग भी सुनें।

ननन्दनादि—हाँ, हाँ, बहुत अच्छा, हम लोग आपके इस प्रस्तावका हृदयसे समर्थन करते हैं। आप यथेच्छ पूछिये। अपना अभिप्राय कहिये। हम लोग आपके साथही रहेंगे। हम लोग भी बहुत दिनोंसे पाणिनिजीके सम्बन्धमें बहुत कुछ जानना चाहते हैं।

[सनकादि सिद्धगण पहाड़ी मार्गपर चलते हुए नन्दिकेश्वरजीके पास जाकर उनको प्रणाम करते हैं। वे रुककर, आशीर्वाद देते हुए उनसे कुशल-क्षेम पूछते हैं]।

सनकादि—हम सभी सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार प्रभृति सिद्धगण आपको प्रणाम करते हैं।

नन्दिकेश्वर—अहो, सनकादि सिद्धगण ? आप लोगोंका जगदुपकार भाव सदा बढ़ता रहे। कहिये आपलोगोंका कुशल तो है ?

सनक—आपके दर्शनसे हमारा सर्वदा कुशल ही रहेगा। भगवन् ? हम लोगोंका बहुत दिनोंका एक मनोरथ है। आज्ञा हो तो, हम उसे व्यक्त करें।

नन्दिकेश्वर—हाँ, हाँ, अवश्य व्यक्त करें।

सनक—भगवन् ! बहुत दिनोंसे हम लोगोंकी यह जिज्ञासा है कि भविष्यमें मुनि पाणिनिके अष्टक शब्दानुशासनके सम्बन्धमें क्या-क्या होनेवाला है ?

नन्दिकेश्वर—अहो, आप लोगोंने अच्छा स्मरण कराया है :—

(उपजाती छन्द)

नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नव पञ्चवारम्।
उद्धर्तुकामः सनकादिसिद्धानेतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम्॥

अर्थ—मूकनृत्य-अभिनयके बाद नटराजोंके भी राजा शिवजीने आप सनकादि सिद्धोंके उद्धारार्थ ही तो चौदह सूत्रोंका आविष्कार डमरू वाद्य द्वारा किया है। इन्हीं सूत्रोंके समूहका मैं विचार करताहूँ। इस संदर्भमें आध्यात्मविषयक व्याख्यानपरक मेरी कारिकाओंकी स्मृतितो आप लोगोंको है ही। उसीके साथ 'पाणिनीयंमहत् सुविहितम्' 'अनुपाणिनीयं देवः 'प्रावर्षत्' अर्थात् पाणिनीय व्याकरणतो शब्द शास्त्रका एक बड़ा ही सुविधान तैयार हो गया है। जब यह ग्रन्थ बनकर तैयार हो गया तो इन्द्रदेवने भी

प्रसन्न होकर अपनी प्रसन्नतासूचक वृष्टि की थी। ये सब पाणिनिजीकी प्रशस्तियाँ भी आप लोगोंने अपनी तपस्या द्वारा जान ही ली हैं। योंही सारी जागतिक समस्याओंको तो आप लोग अपनी तपस्याओंके प्रभाव द्वारा जानते ही हैं, तथापि मेरे मुखसे आप लोग कुछ सुनना चाहते हैं तो मैं भी आपकी कर्णशष्कुलीको तृप्त करना चाहता हूँ।

सनकादि—हाँ, हम लोग सावधान हैं। आप कहिये।

नन्दिकेश्वर—पाणिनिमुनिके प्रभावसे प्रभावित होकर बहुतसे एतद्देशीय और विदेशी बौद्ध तथा वैदिक बड़े-बड़े विद्वान् यात्रा-प्रसङ्गसे उनके जन्मस्थान शालातुर नगर समय-समयपर जाकर वहाँके वृत्तान्तोंका संग्रह कर तथा उनकी विशाल प्रस्तरमयी मूर्तिका दर्शन करके अपनेको कृतार्थ करेंगे। च्वाङ्गत्सिन नामक चीनी यात्री वहाँ जाकर वहाँ अपना हृदयोद्गार करेंगे। उन्हींके साथ अन्यान्य विद्वान् भारतीय ग्रन्थकार भी, जैसे सर्व श्री जयादित्य, वामन, जिनेन्द्र बुद्धि, धर्मकीर्ति, प्रभृति बौद्ध विद्वान् एवं राजशेखर क्षेमेन्द्र, सोमदेव प्रभृति बहुतसे वैदिक विद्वान् अपनी-अपनी प्रतिभाके अनुसार पाणिनिजीकी प्रशंसा करेंगे। इसी प्रकार पाणिनि-प्रशस्ति-अभिनयके कारण सभी लोग स्वर्गसे आकर भी अपनी भूमिकाको पूरा करेंगे।

सनकादि—अहो, आपकी अमृत वाणीको सुनकर हम लोग तो आनन्दविभोर हो गये हैं। आपके उपकारको हम भूल नहीं सकते। तभी तो आपके अद्भुत भावोंको सुनते समय हम लोगोंको कालातिक्रमणका भी ज्ञान नहीं हो पाया। हाँ, तो आपकी आज्ञा हो तो हमलोग जनोपकारमें पुनः प्रवृत्त हो जायँ।

नन्दिकेश्वर—हाँ, हाँ, आप लोगोंकी लोकसेवा-प्रवृत्ति उत्तरोत्तर बढ़ती रहे। यही मेरा मनोरथ है।

[नन्दिकेश्वरजी अपना कथन समाप्त करते ही चल पड़ते हैं]

(परदा गिरता है)

आठवाँ दृश्य समाप्त

नवाँ दृश्य

[चीनके प्रसिद्ध यात्री च्वाङ्‌त्सिन्‌के स्वागतार्थ आयोजित सभामें एक ही साथ सभी अपने-अपने देशीय वेशमें बैठे हुए हैं। चीनी यात्री च्वाङ्‌त्सिन् तथा भारतदेशीय जयादित्य, वामन, जिनेन्द्रबुद्धि, धर्मकीर्ति प्रभृति बौद्ध विद्वान् तथा अन्यान्य सज्जन एवं राजशेखर, क्षेमेन्द्र, सोमदेव आदि वैदिक मनीषिगण तथा शालातुर नगरकी स्त्रियाँ कुछ अन्य लोग और एक सभाध्यक्ष—जो बीचमें सभा-नियन्त्रण करते रहेंगे। इन सब पात्रोंका प्रवेश पर्दा उठाकर होगा]

सभाध्यक्ष—(उठकर) आज शालातुर नगरकी इस सभामें भिन्न-भिन्न काल तथा देशके निवासी पूर्व और उत्तर दोनों देशोंके विद्वान् अभिनयकी भूमिका ग्रहण करनेके अभिप्रायसे स्वर्गसे पधारे हुए हैं। अतः ये सभी मेरे अभिनन्दनके पात्र हैं। इनमें सर्वप्रथम चीनी यात्री च्वाङ्‌त्सिन अपना अनुभव बतायेंगे। इसके बाद बौद्ध विद्वान् और अन्तमें वैदिक विद्वान् क्रमशः अपना-अपना अभिप्राय पाणिनिजीके विषयमें व्यक्त करेंगे।

[यह कहकर सभाध्यक्ष बैठ जाते हैं। तदनन्तर च्वाङ्‌त्सिन उठते हैं]

च्वाङ्—(उठकर) माननीय सभाध्यक्ष महोदय तथा शालातुर नगरकी विदुषी स्त्रियाँ, देशी-विदेशी यात्रिवर्ग एवं विद्वद्-वृन्द ? मैं चीन देशका यात्री च्वाङ्त्सिन नामका हूँ। आज गान्धार देशके शालातुर नगरकी इस सभामें आप लोगोंने मेरा स्वागत करके जो उत्साह बढ़ाया है उससे मैं अपनेको धन्य मानता हूँ। इस छठी शताब्दीमें भारत-यात्रा प्रसंगमें आये हुए मुझे अपने हृदयोद्गारको निवेदन करनेका जो अवसर मिला है, उसके लिए मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। आज मैं इस पवित्र पाणिनि-तीर्थमें अपनेको पवित्रकर कृतकृत्य हो गया हूँ।

सभाध्यक्ष—विदेशी होते हुए भी आप भारतभूमिमें इतनी श्रद्धा रखते हैं तो आप वस्तुतः यथार्थ रूपमें हमारे अभिनन्दनके पात्र हैं।

च्वाङ्—इस भारतमें भ्रमण करते हुए मैंने जो अनुभव प्राप्त किया है, उसका सार यही है, जो मैं आपके सामने निवेदन करना चाहता हूँ।

सभाध्यक्ष—तो आप संक्षेपमें यथेच्छ रूपसे उसका वर्णन करें।

च्वाङ्—पूरे भारतवर्षका भ्रमण करनेपर मुझे यह अनुभव हुआ कि पहले यहाँ संस्कृत साहित्य बहुत विस्तृत था। काल-क्रमसे उसका ह्रास हो जानेपर देवताओंने पृथ्वीपर अवतार लेकर उसकी रक्षा की। पुनः कालक्रमसे उसमें विकृति आनेपर पाणिनिजीने सभी प्रान्तोंमें घूम-घूमकर शब्दकोशका संग्रह करके तथा उस समयतकके विस्तृत संस्कृत-साहित्यका मन्थन करके महेश्वर देवके प्रसादसे एक अद्भुत व्याकरण ग्रन्थ एक हजार श्लोकका निबद्ध किया, जिसे पाणिनीयाष्टक शब्दानुशासन कहते हैं।

अध्यक्ष—अनुभव तो यहाँतक आपका विलकुल तथ्य है। हाँ, तो इसके बाद ?

च्वाङ्—इसे उन्होंने राजकी सभामें सम्मानके लिए रखा राजाने भी उस ग्रन्थका समुचित सम्मान करके उन्हें एक हजार स्वर्ण मुद्राका धर्म्य पुरस्कार प्रदान किया। साथ ही उस ग्रन्थके सर्वाङ्गपूर्ण अध्येताके लिए भी एक हजार स्वर्ण मुद्राका धर्म्य पुरस्कार देनेकी राजघोषणा करायी थी। तभीसे भारतमें तथा इसके बाहर भी इस ग्रन्थका पठन-पाठन अविच्छिन्न रूपसे चलता आ रहा है। यहाँ मैं महर्षिकी प्रस्तरमयी विशाल मूर्तिका दर्शन करके भी बहुत प्रसन्न हूँ।

[यह कहकर च्वाङ् बैठ जाता है]

अध्यक्ष—वाह, वाह अज हम लोग भी आप ऐसे अतिथिका सत्कार करके कृतकृत्य हो गये हैं। इसलिए आपको भूयोभूयः शतशः धन्यवाद है। (समासदोंकी ओर अभिमुख होकर) इसके बाद अब अन्य विद्वान् अपना-अपना अभिप्राय व्यक्त करेंगे।

जयादित्य—(उठकर) हे, हे महाबोधिवर्ग ? पाँचवीं सदीका रहनेवाला मैं जयादित्य हूँ। पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि इन तीनों मुनियोंपर अटूट श्रद्धा होनेके कारण मैंने इधर-उधर, जहाँ-तहाँ फैले हुए उनके उपदेशरत्नोंको एकत्र सजाकर सारी अष्टाध्यायीपर 'काशिका वृत्ति' नामसे विस्तृत ग्रन्थ लिखा है, जो शब्दशास्त्रका सर्वाङ्गपूर्ण ग्रन्थ-रत्न है। उसके उपक्रम पद्योंसे ही उसके विषयोंका संक्षिप्त ज्ञान हो जायगा, देखिये :—

(हरिगीतिका छन्द)

आजतककी वृत्तियोंमें भाष्यमें अन्यत्र भी,
सब धातु औ गणपाठमें जो रत्न बिखरे थे सभी।
कर गौरसे संग्रह सभीका वार्तिकादि-विभूपिता,
यह काशिका नाम्नी बनायी वृत्ति भावा-विभूषिता ॥
है भाग्यकी भी इष्टि इसमें और वार्तिक हैं यहाँ,
सब शुद्ध है गणपाठ औ गूढार्थ सूत्रोंका यहाँ।
है 'काशिका' यह नाम काशीमें लिखी रहकर यहाँ;
सब देख लें व्युत्पन्न रूपोंकी सधनिका है यहाँ ॥

इन्हीं दो पद्योंसे उस वृत्तिका विषय तो ज्ञात हो गया। अब मैं सूत्रार्थ करनेकी वैज्ञानिक पद्धति यहाँ थोड़ेमें बता देना चाहता हूँ, जो पाणिनिजीकी चलाई हुई है। कुछ दिनोंतक लुप्त रही, ऐसा समझिये। छात्रोंको तो यह कण्ठस्थ कर लेना चाहिये।

(वसन्ततिलका छन्द)

घोरषो क्रमेण पहले ऋजुपाणिनीयम्;
पीछे सुसन्धि ·पदबोध विचारणीयम्।
जो हो विभक्तिविषमा स्थितपूर्वसूत्रे,
ले लो उसे झट सदाऽग्रिम सर्वसूत्रे ॥
हाँ जो विशेषण विशेष्य हुआ तभी भी,
ले लो उसे यदि समान विभक्तिका भी।

यों जान लो अधिकृती अनुवृत्ति सर्वा,
सूत्रार्थकी यह बनी विधि है अपूर्वा ॥

[इतना कहकर जयादित्यजी बैठ जाते हैं]

वामन—(उठकर) हे, हे विद्वानो ? आप लोगोंने जयादित्य महोदयकी बात सुन ली। मैं स्वयं भी उसी सदीका रहनेवाला हूँ। मेरा नाम वामन है। मुझे भी यही कहना है कि हम दोनोंने पूर्वाचार्योंको देखकर पृथक्-पृथक् पाणिनीयाष्टककी वृत्ति लिखी थी। सो क्या कारण है कि आरम्भमें पाँच अध्यायतक तो जयादित्य देवकी और आगे छठे अध्यायसे आठवें अध्यायतक मेरी काशिका-वृत्ति बतलायी जाती है ? इसका कारण तो मुझे और जयादित्य महोदय दोनोंको ही विदित नहीं है, औरों को क्या कहें। पाणिनीयाष्टाध्यायीके सम्बन्धमें मेरी निष्ठा सुनिये—

(शिखरिणी छन्द)

पढ़ो अष्टाध्यायी, सरलसरला वेद सदृशी,
विभक्ति लेगी जो, उपरिग पदोंकी विसदृशी।
सुपूर्णा वैज्ञानी, क्रमगत पढ़ो होय सुगमा,
बतावें क्या भाई, सबविधि कहाती अनुपमा ॥

[इतना कहकर वामनजी बैठ जाते हैं]

जिनेन्द्रबुद्धि—(उठकर) सभाध्यक्ष महोदय ? सातवीं सदीका मैं जिनेन्द्रबुद्धि विहारी हूँ। यद्यपि मैं बौद्ध दीक्षासे दीक्षित था, तथापि पाणिनिमुनिके प्रभावसे प्रभावित होकर उनकी अष्टाध्यायीकी सब प्रकारसे परिपूर्ण सारी काशिका वृत्ति

देखनेसे विमुग्ध होकर मैंने 'काशिका-विवरणापञ्जिका' नामकी उसकी विस्तृत टीका लिखी है, जिसे 'न्यास' भी कहते हैं। आपके सभी सभासदोंके सम्मुख मैं संक्षेप रूपसे उस टीकापर प्रकाश डाल रहा हूँ :—

(उपजाति छन्द)

जो काशिका वृत्ति अभूतपूर्वा,
लिखी सही बात बड़ी अपूर्वा।
खुले उसीका सब गूढ़ अर्थ,
टीका लिखी 'न्यास' बड़ी तदर्थ ॥

न्यासकी अन्यान्य विशिष्टता क्या बतलाऊँ थोड़ेमें यह निवेदन है कि :—

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सिद्धी है करता समस्त पदकी सूत्रार्थ भी खोलता;
थोड़ेमें वह काशिका-मरमका गूढार्थ है बोलता।
जो चाहें सब 'काशिका' समझना सो छात्र लें 'न्यास'को;
देखें ध्याननिमग्न होकर वहाँ सद्बुद्धि-विन्यासको ॥

[इतना कहकर जितेन्द्रबुद्धि बैठ जाते हैं]

धर्मकीर्ति—(शिष्यके साथ घूमकर परस्पर बात करते हैं) अयि प्रिय वत्स राहुल ? छ सौ चालीसवीं सदीके इन बौद्ध विद्वानोंके मोहको देखकर मैं तो घबड़ा गया हूँ। कुछ कहते नहीं बन रहा है। मैं क्या कहूँ, क्या करूँ। इसमें तुम्हारी क्या राय है ? मैं जानना चाहता हूँ।

राहुल—(झुककर) उपाध्यायजी आप साफ-साफ कहें तो मैं उस-पर विचार करूँ। अभी तो मैं आपका अभिप्राय ही कुछ नहीं मसझ पा रहा हूँ कि आप कह क्या रहे हैं।

धर्मकीर्ति—अरे ? तुम मेरी बात सुनते नहीं हो ? देखो, ये बौद्ध विद्वान् लोग पाणिनीजीके प्रभावके वशीभूत होकर उनकी अष्टाध्यायीके पढ़नेमें इतने तल्लीन हैं कि उसीमें डूबे रहनेके कारण न चाहते हुए भी उनको वेद पढ़ना पड़ता है। क्योंकि अष्टाध्यायीमें बीच-बीचमें छन्दस्युभयथा ३।४।११७, छन्दसि च ५।१।११६, बहुलं छन्दसि २।४।३९ तथा ७।१।१० इत्यादि सूत्र आते ही हैं। उनके उदाहरणके लिए उन्हें वेद पढ़ना ही पड़ता है। ये सारी कवाहटें वे उठा रहे हैं, पर वैदिक सूत्रोंसे रहित केवल लौकिक शब्द रूपोंकी सिद्धि करनेवाले और अति संक्षिप्त मूर्द्धभिषिक्त उदाहरणोंवाले सूत्रोंसे अलंकृत नयी प्रक्रिया-पद्धतिसे लिखे गये मेरे 'रूपावतार' ग्रन्थको नहीं अपना रहे हैं। बस यही तो मेरा कहना है।

राहुल—अहो, यह तो सचमुच विचारणीय बात है। परन्तु उपाध्यायजी, इसके लिए चिन्ता करनेकी क्या आव-श्यकता है ? यह कार्य तो आनन-फाननमें सिद्ध हो सकता है। देखिये, यह तो प्रधानतया अपने बौद्ध विद्वानोंकी सभा है। इसमें उपस्थित सभी बौद्ध विद्वानों-को उपाध्यायजी बतावें कि अष्टाध्यायी पढ़ने-पढ़ानेसे हम बौद्ध छात्रों और विद्वानोंको ये-ये दोष होते हैं। इस-लिए हम सब अष्टाध्यायी छोड़कर रूपावतार-प्रकियासे ही पढ़ें-पढ़ावें इत्यादि।

धर्मकीर्ति—हाँ, वत्स हाँ, तुमने अच्छी युक्ति बतायी है। यद्यपि ऐसे कहनेसे आत्मप्रशंसा दोष दीखता है, पर क्या करना

है, जैसे भी हो वैसे अपने सिद्धान्तकी रक्षा करना तो कर्तव्य ही है। अस्तु, अब मैं तुम्हारे इस सुझावका भाष्य कर लूँगा और ऐसा शुभ अवसर कहाँ मिलेगा, जहाँ सभी विद्वान् एक ही जगह उपस्थित हों। अतः यहाँ ही मैं इसी सभामें अपना आशय व्यक्त करता हूँ। (सभाकी ओर अभिमुख होकर) हे विद्वानो! हम लोग सभी बुद्धदेवकी दीक्षासे दीक्षित हैं तथा उनके उपदेशोंके पालनेमें कृतसंकल्प हैं। यह तो सभीको ज्ञात है कि हम लोग वेदकी उपेक्षा करते हैं, परन्तु पाणिनीजीकी अष्टाध्यायीके कारण वेद पढ़ना-पढ़ाना हम लोगोंके सिरपर बराबर सवार ही रहता है। इसी कारण मैंने वैदिक सूत्रोंको छाँटकर पाणिनीयाष्टकके लौकिक सूत्रोंमें भी मूर्द्धभिषिक्त उदाहरणवाले सूत्रोंके आधारपर लक्ष्यप्रधान (प्रयोग प्रधान) 'रूपावतार' नामक एक प्रक्रिया ग्रन्थ तैयार किया है, जिससे व्याकरणका ज्ञान पूरा हो जायगा। लौकिक प्रयोगोंकी सिद्धि अनायास ही सब कर लेंगे।

और इसके द्वारा वेदाडम्बर ढूँढ़ने-ढाढ़नेके प्रयाससे आप लोग बिलकुल बच जायँगे। यह निश्चय जानें। परन्तु पाणिनीसूत्रोंको क्रमसे ही आपको कण्ठस्थ करना कराना पड़ेगा। यही तो उन सूत्रोंकी विशेषता है। थोड़ेमें सुनिये—

(हरिगीतिका छन्द)

क्रम पाठ-लाघवमें मुनीकी जो तपस्या है सही;
अरु बुद्धिवैभव ये परिश्रम तो कहा जाता नहीं।

मैं मुग्ध हूँ यह देख अद्भुत पाणिनीकी विज्ञता;
क्रम सूत्र पढ़ना है जहाँ सब शास्त्रोंकी भिज्ञता ॥
आः सूत्रका क्रम जो बनाया है मुनीने देख लें,
सब सूत्रकी वृत्ती बनाना यों स्वयं ही सीख लें।
हा ध्वस्त जो क्रम हो गया सूत्रार्थ मानो खो गया,
हा अर्थ तो है दूर मुनिका लुप्त आशय हो गया ॥

[इतना कहकर धर्मकीर्ति बैठ जाते हैं]

राजशेखर—(उठकर) सभाध्यक्ष महोदय, मैं कान्यकुब्ज राजा महेन्द्रपालके आश्रित महाराष्ट्रप्रान्तीय चेदि-मण्डलका निवासी राजशेखर नामका विद्वान् नवीं शताब्दीका रहनेवाला हूँ। मैंने 'काव्यमीमांसा' नामक ग्रन्थ लिखा है। उसमें मैंने पाणिनी, कात्यायन और पतञ्जलिके सम्बन्धमें लिखा है कि पाटलिपुत्र नगरमें शास्त्रकारोंकी परीक्षा होती थी ऐसा सुननेमें आया है।

अत्रोपवर्षवर्षाविह पाणिनिपिङ्गलाविह व्याडिः।
वररुचि पतञ्जली इह परीक्षिताः ख्यातिमुपजग्मुः ॥

अर्थ—यहाँ पुष्पपुरमें उपवर्ष और वर्षकी परीक्षा हुई, पाणिनि और पिङ्गलाचार्य तथा व्याडिकी परीक्षा हुई, वररुचि और पतञ्जलिकी भी यहाँ ही परीक्षा हुई है। ये सभी विद्वान् इसी पुष्पपुरीमें परीक्षित होकर जगत्में ख्याति प्राप्त कर चुके हैं।

[इतना कहकर राजशेखर बैठ जाते हैं]

क्षेमेन्द्र—(उठकर) मैं ग्यारहवीं सदीका 'बृहत्कथामञ्जरी'का निर्माता क्षेमेन्द्र हूँ। मैंने गुणाढ्य कविकी लिखी पैशाचिक भाषामयी 'बृहत्कथा'के आधारपर जो कुछ भी पाया वही इन तीनों (पाणिनि, कात्यायन, पतञ्जलि) मुनियोंके सम्बन्धमें 'बृहत्कथा मञ्जरी'में लिखा है। उनके सत्या-सत्यका विचार तो ऐतिहासिकोंका कर्तव्य है। मुझे तो अष्टाध्यायीके सम्बन्धमें यही कहना है कि—

(उपजाति छन्द)

समाजशिक्षा मिलती इसीसे,
साहित्य शिक्षा मिलती इसीसे।
शिक्षा यहाँ व्याकरण-प्रधाना
सुधीगणोंने इसको बखाना ॥

(वसन्ततिलका छन्द)

जाने इसे न बस केवल छन्द-शास्त्र,
माने इसे सकल नीति-समाज-शास्त्र।
जोभी पढ़े लगनसे वह विज्ञ होगा,
सर्वत्र हो चतुरता गुणलाभ होगा ॥

[इतना कहकर क्षेमेन्द्रजी बैठ जाते हैं]

सोमदेव—(उठकर) मैं इग्यारहवीं सदीक 'कथासरित्सागर' नामक ग्रन्थका प्रणेता कश्मीरनिवासी सोमदेव हूँ। मेरे समयसे बहुत पूर्व हुए इन तीनों मुनियोंके विषयमें दन्तकथाके आधारपर जो भी मैंने पाया वही अपने ग्रन्थमें लिखा है। मैं कुछ अधिक नहीं कहूँगा सुनिये :—

(शार्दुलविक्रीडित छन्द)

शिक्षा-हेतु पुरा यहाँ चल रही थी पाणिनि-प्रक्रिया ।
होते थे जिससे सुधी जन सभी कैसी भली थी क्रिया ॥
थोड़ेमें जब हो गया पदपदार्थ-ज्ञान पूरा जिसे ।
क्या बाकी बचता भला अब कहें जो सीख देवें उसे ॥

(शालिनी छन्द)

अष्टाध्यायी बाल्यमें घोखली है ।
तत्पश्चात् जो काशिका भी पढ़ी है ।
क्या देरी है भाष्यके सीखनेमें,
आधा तो है, अष्टक त्यागनेमें ॥

यदि आप थोड़ेमें सुनें तो सार यह है कि :—

(वसन्ततिलका छन्द)

था शब्द शास्त्र पहले शिवने बढ़या,
तो कुम्भ तुल्य उसको मुनिने घटाया ।
देखा पतञ्जलि उसे जब मुग्ध होके,
आया सुभाष्य उनका तब दुग्ध हो के ॥

[इतना कहकर सोमदेव बैठ जाते हैं]

सभाध्यक्ष—(उठकर) अहो, आप लोगोंके अकृत्रिम प्रेम तथा वात्सल्य-भावसे हम लोग अपनेको बड़ा ही कृतकृत्य मान रहे हैं। पुनः आप महानुभावोंका हृदयसे स्वागत करते हुए हम अपना आभार प्रकट करते हैं।

आप लोगोंने महामुनि पाणिनिमें अपना अन्तिम अनुराग बताकर उनके अष्टक—प्रचारके जयस्तम्भको पातालतक स्थिर कर दिया है। अतः आप सब लोगोंको हृदयसे हमारा धन्यवाद है। एक स्वरसे सभी बोलें :—

'महामुनि पाणिनिकी जय हो।'

[सभी एक स्वरसे बोलते हैं महामुनि पाणिनिकी जय हो]

(परदा गिरता है)

नवाँ दृश्य समाप्त

इति चतुर्थोऽङ्कः

अथपञ्चमोऽङ्कः

दसवाँ दृश्य

[भोजपुरकी कुछ कन्याएँ हाथोंमें घड़े लेकर पानी भरने जा रही हैं। बीचमें रुककर अपने-अपने आगे घड़ोंको रखकर बातें कर रही हैं। ये कन्याएँ राष्ट्रभाषा अच्छी तरह जानती हैं, इसलिए ये विशुद्ध हिन्दीमें बातें करेंगी]।

मञ्जुभाषिणी—अरी सखी विमर्शिणि ? क्या बात है कि अपने नगरमें बड़े-बड़े पण्डितगण आया-जाया करते हैं। इसका कारण मुझे बताओ।

विमर्शिणी—सखी मञ्जुभाषिणि ? तुम मुझसे ही क्यों पूछती हो ? अन्यमनस्कासे क्यों नहीं पूछती ?

मञ्जुभाषिणी—क्या कहती हो ? अन्यमनस्कासे क्यों नहीं पूछती। अरे वह तो अन्यमनस्का ही ठहरी वह क्या बतायेगी। तुम्हीं तो विमर्षिणी यथानामा तथागुणा हो। अतः तुम्हीं मेरी जिज्ञासा पूरी करो।

विमर्शिणी—(मुस्कुराकर) सखि अन्यमनस्के ? सुनती हो, यह सचमुच मञ्जुभाषिणी है। यह सब कुछ जानती हुई भी मुझसे सब कुछ सुनना चाहती है। (उसकी ओर अभिमुखी होकर) अच्छा सखि मञ्जुभाषिणि ? तुम बहुत चतुर हो सुनो ! अपने नगरमें विख्यात राजा महाराज भोजके सम्बन्धमें यह कविता तो तुमने सुन रखी है:—

(द्रुतविलम्बित छन्द)

कविषु, वादिषु, वग्मिषु भोगिषु,
द्रविणवत्सु सतामुपकारिषु ।
धनिषु धन्विषु धर्मधनेष्वपि,
क्षितितले नहिं भोजसमो नृपः ।।

अर्थ—कवियोंमें, वादियोंमें, वाग्मियोंमें, सम्पत्तिशालियोंमें, सज्जनोंके उपकार करनेवालोंमें, धनियोंमें, धनुर्धरोंमें, धर्म करनेवालोंमें, पृथिवी तलपर कहीं भी महाराज भोजके समान राजा नहीं हैं।

उन्हीं महाराज भोजके संस्कृतानुरागसे एवं पाणिनि-प्रक्रियाके पाण्डित्यसे प्रभावित होकर सर्वदा ही अपनी धारा नगरीमें वड़े-बड़े विद्वानोंकी धारा लगी रहती है। क्या तुम नह नहीं जानती ? उन्हीं भोजराजके गुणोंसे आकृष्ट होकर विद्वान् आज भी पधारे हुए हैं।

अन्यमनस्का—हाँ, हाँ, यह तो हम लोग देख ही रही हैं कि बड़े-बड़े पगगड़धारी पण्डित एकत्र हो रहे हैं, तो तुम उनके नाम भी तो बताया करो।

विमर्शिणी—क्या मञ्जुभाषिणि, कहो तुम्हारे प्रश्नका तो उत्तर हो गया। अब क्या तुम इनके नाम भी सुनना चाहती हो ?

ञ्जुभाषिणी—तो क्या हर्ज है। इनके नाम, गुण भी वता देगी तो हमारे कान भी पवित्र हो जायँगे।

विमर्शिणी—अच्छा तो सुनो। एक तो तिलकमञ्जरीके लेखक धनपाल पण्डित हैं। दूसरे नवसाहसांक-चरितके

रचयिता पद्मगुप्त हैं। तीसरे यजुर्वेद वाजसनेयि संहिताके भाष्यकर्ता उव्वटदेव हैं। चौथे भोजराजके परमप्रिय प्रसिद्ध दरबारी पण्डित कवि कालिदास ही हैं। अन्यान्य सज्जन भी बड़े-बड़े विद्वान् ही हैं, पर मैं भी उनके सम्बन्धमें कुछ जानती नहीं हूँ।

प्रत्युत्पन्नमति—(बीचमें ही बात काटकर) बहन विमर्शिणी, तुम तो पुरुषोंमें ही एकके बाद एकका नाम गिनाती हो। किसी स्त्री का भी तो नाम बताओ।

अन्यमनस्का—तो स्त्रियोंमें किसका नाम बताये ? कोई हो भी तो।

वाग्मिनी—(तमककर) तो क्या यहाँ भारतमें कोई विदुषी स्त्री है ही नहीं ?

अन्यमनस्का—होती रहे। जब प्रसिद्ध विदुषी नहीं और समाजके सामने आती नहीं तो वह कहाँसे कैसे बतायी जाय ?

मञ्जुभाषिणी—नहीं, नहीं, बहनो ! ऐसा मत सोचो। वाग्मिनी बहुत कुछ कहना चाहती है तो उसे कहने दो। (उसकी ओर अभिमुखी होकर) कहो बहन वाग्मिनी ! कहो।

वाग्मिनी—(बड़े गर्वसे) वाह वाह, भारतमें तो ऐसी-ऐसी विदुषी स्त्रियाँ हो गयी हैं और वर्तमान समयमें भी हैं, जो बड़े-बड़े विद्वान् पुरुषोंके शास्त्रार्थमें मध्यस्था होकर निर्णायिकाका कार्य कर गयी हैं। देखो, राजा जनककी सभामें वाचक्नवी विदुषी गार्गीको, महिष्मतीपुरीमें मण्डन मिश्रकी स्त्री भारती देवीको। इन दोनों देवियोंको न्यायाधीशका पद प्राप्त हो चुका है।

राजा जनककी सभामें जहाँ कुरु, पाञ्चाल प्रभृति सभी देशोंके बड़े-बड़े विशिष्ट विद्वान् एकत्र थे, उनमें राजा जनकके प्रश्नपर जब शास्त्रार्थ प्रारम्भ हो गया तो वाचक्नवी गार्गीने ही सभी विद्वानोंका प्रातिनिध्य लेकर

याज्ञवल्क्यकी विद्वत्ताकी परीक्षा ली थी। साथ ही जगद्-गुरु शंकराचार्य तथा अपने पतिदेव मण्डनमिश्रके जगत्प्रसिद्ध उस शास्त्रार्थमें भारती देवीने ही श्री शंकराचार्य-के प्रस्तावपर मध्यस्था होकर बड़ी योग्यतासे निर्णायिकाका कार्य किया था। इसके पूर्व तथा परकालमें भी स्त्रियोंकी विद्वत्ताके अनेक उदाहरण मिलते हैं। विदुषी, विदुला, अश्वघोषा, मञ्जुश्री, महारानी मन्दालसा, महाविदुषी विज्जका आदि प्रख्यात आर्य महिलाओंके नाम संस्कृत-वाङ्मयके इतिहासमें स्वर्णाक्षरोंमें लिखे हैं। उनकी विद्वत्ता-का गौरव विदेशोंमें भी गाया जा रहा है।

[इसी बीच उद्दीप्ता बोल उठी]

उद्दीप्ता—हाँ, हाँ, मैं भी इनको जानती हूँ और विज्जकाका तो ललकार भी मैं सुन चुकी हूँ। वह तो संस्कृतके प्रकाण्ड पण्डित दण्डी कविको भी फटकारती है और स्पष्ट शब्दोंमें ललकारती है :—

(अनुष्टप छन्द)

नीलोत्पल दलश्यामा विज्जकां माम जानता।
वृथैव दण्डिना प्रोक्ता सर्वशुक्ला सरस्वती॥

अर्थ—नीलकमलके नीले पंखुड़ियोंके समान श्यामा मुझ विज्जका सरस्वतीको न जानकर दण्डी कविने व्यर्थ ही सरस्वतीको सर्वशुक्ला वर्णन किया है। उन्हें तो सरस्वतीको श्यामा बताना चाहिए था। क्योंकि मैं श्यामा ही तो हूँ और मैं ही तो सरस्वती हूँ, इत्यादि।

गम्भीरनादा—वाह, वाह, वाह बहन, वाग्मिनी, तुमने विज्जकाकी प्रशंसा करके और उद्दीप्ताने उसे सरस्वती बताकर हम सबोंके उत्साहको दुगुना कर दिया है। धन्य है, धन्य है। ऐसी ही सुधीरा नारियाँ तो देशका भूषण हो गयी हैं।

मञ्जुभाषिणी—ओह, देखो न इन बहनोंके विवादमें मेरा प्रश्न तो खटाईमें पड़ गया।

विमर्शिणी—क्या अभी भी तुम्हारा प्रश्न बाकी ही बचा है?

मञ्जुभाषिणी—तो क्या तुमने पूरा कर दिया है?

विमर्शिणी—तो पूछती क्यों नहीं? जो चाहो सो पूछ लो। मैं उत्तर देनेको तैयार बैठी हूँ।

मञ्जुभाषिणी—बहन विमर्शिणि! तुमने अपने महाराज श्री भोजराजको पाणिनि-प्रक्रियाका प्रकाण्ड पण्डित बताया है सो कैसे?

विमर्शिणी—अच्छा हम लोगोंके महाराज भोज तो पाणिनि-प्रक्रियाके बड़े विद्वान् हैं। उन्होंने तो पाणिनि-प्रक्रियापर 'सरस्वती कण्ठाभरण' नामका व्याकरण ग्रन्थ लिखा है, जिसमें पाणिनिजीकी अष्टाध्यायीसे भी अधिक सूत्र हो जाते हैं। उसका कारण यह है कि वार्तिक एवं गणपाठको भी उन्होंने सूत्रोंमें ढाला है, तथा परिभाषाएँ भी अधिकतर सूत्ररूपमें आ गयी हैं। पाणिनिजीसे भी अधिक सरलता लानेका तथा सभी विषयोंको एकत्र संग्रह कर देनेका ही उनका उस ग्रन्थमें प्रयत्न है। यही समझो।

मञ्जुभाषिणी—वाह, वाह, तो हमारे महाराज जैसे राजनीतिके महान् विद्वान् हैं, वैसे ही व्याकरणके भी महान् विद्वान् हैं। तो चलो हम लोग भी धन्य हैं कि ऐसे महाराजकी नगरीमें निवास करती हैं।

अन्यमनस्का—अरे ! तुम लोग बातके वतङ्गड़में फँसी हो, कुछ खबर भी है ? बहुत देर हो गयी है। चलो चलो, जल्दी-जल्दी पानी भरके घर चली चलें।

[सभी घड़े उठाकर चली जाती हैं]

(परदा गिरता है)

दसवाँ दृश्य समाप्त

ग्यारहवाँ दृश्य

[महाराज भोजकी सभा लगी है। उसमें मन्त्रिगण परिचायकमण्डल तथा नगर के गण्य मान्य विद्वान्, रईस, सेठ, साहूकार, व्यापारी, सौदागर लोग बैठे हैं। बाहरसे तथा अन्दर दूसरे दृश्य सजावट घरसे नगरमें घोषणा होती है। उद्घोषक ढोल पीटता हुआ प्रवेश करेगा।]

उद्घोषक—

विप्रोऽपि यो भवेन्मूर्खः, सःपुराद्बहिरस्तु मे।
कुम्भकारोऽपि यो विद्वान् स तिष्ठतु पुरे मम॥

[यह घोषणा जब शान्त हो जाती है तब मन्त्रीजी उठते हैं]

राजमन्त्री—(उठकर) महाराजकी घोषणा तो आप लोगोंने सुनी ही है कि संस्कृतज्ञ ही मेरी नगरीमें रह सकता है। संस्कृतानभिज्ञ ब्राह्मण देवता भी मेरी नगरीकी सीमाके बाहर रहेंगे। इसी घोषणा के कारण यह कुविन्द (जुलाहा)

---

१. अर्थ—हे पुरवासियो, महाराज भोजकी यह राजघोषणा है कि यदि ब्राह्मण भी मूर्ख हो तो वह मेरी नगरीकी सीमाके बाहर रहेगा। और यदि कुम्भार भी संस्कृतज्ञ है, तो वह मेरी नगरी (धारा)में रहेगा।

सीमामें प्रविष्ट हुआ है। यह महाराजके सामने कुछ अपना निवेदन करेगा। आप लोग भी सुनें :—

[कुविन्द सिपाहियोंके साथ आता है]

कुविन्द—महाराज, मेरी यह प्रार्थना सरकारी सिंहासनके पास है।

[हाथमें प्रार्थनापत्रका कागज़ दिखाता हुआ सिंहासनके पास रखता है—(सिपाहियोंकी ओर संकेत करके) ये सिपाही मुझे नाहक तङ्ग करते हैं। मैं तो केवल संस्कृतज्ञ ही नहीं हूँ, बल्कि मैं तो कवि भी हूँ। महाराज परिषद्के साथ मेरा काव्य सुनें :—

(वसन्ततिलका छन्द)

काव्यं करोमि नहि चारुतरं करोमि,
यत्नात्करोमि यदि चारुतरं करोमि।
राजन्य - मौलि - मणि-मण्डित-पाद-पीठ,
हे साहसाङ्क ! कवयामि वयामि यामि ॥

महाराज—क्यों मन्त्रिन् ? क्या यह भी नगरसे निकाला जा रहा है ?

मन्त्री—नहीं सरकार, इसे किसीने धोखा दिया है। (कुविन्दकी ओर अभिमुख होकर) देखो तुम निश्चिन्त रहो। तुम्हें इस नगरीमें रहनेमें कोई बाधा नहीं है। (सिपाहियोंकी ओर अभिमुख होकर) स्वयं जाँचकर गिरफ्तारी किया करो। दूसरेके कहनेपर नहीं।

पुलिस—(सलामी देता हुआ) कभी ऐसा नहीं होता। हम लोग बराबर नगरमें रातोदिन घूमा करते हैं। अनुशासन-भङ्ग

करनेवालोंको ही गिरफ्तार किया करते हैं। यह गिरफ्तारी तो जल्दीमें गलतीसे हो गयी है। इसे क्षमा किया जाय।

[सलामी देकर कुविन्दके साथ चला जाता है]

मन्त्री—अये सभासदो, महाराजकी आज्ञा है कि सभी सभासद लोग अपनी-अपनी सम्मति पाणिनिजीकी प्रतिभाके सम्बन्धमें संक्षेपसे प्रकट करें :—

धनपाल—(उठकर) महाराज! मैं तो पाणिनिजीके न्यायालयके न्यायको देखकर आनन्दनिमग्न हूँ।

महाराज—सो कैसे? हम लोगोंको भी तो बताइये :—

धनपाल—देखिये महाराज! क रू+आस्तेकी स्थितिमें जब भो भगो अघोऽपूर्वस्य योऽशि ८।३।१७ इस सूत्रसे रू का य हो जाता है तब कय्+आस्तेकी स्थितिमें लोपः शाकल्यस्य ८।३।१९ से य् के लोप हो जानेपर क आस्ते इस त्रिपादीस्थ सिद्ध प्रयोगमें छठे अध्याय प्रथम पाद एक सौ एक वादी सूत्र अकः सवर्णेदीर्घः ६।१।१०१ जब लगने चलता है, तब पूर्वत्रासिद्धम् ८।२।१ यह त्रिपादीस्थ न्यायाधीश सूत्र अपने त्रिपादी घरके आठवें अध्याय तृतीपादके उन्नीसवें प्रगतिवादी सूत्र लोपः शाकल्यस्य ८।३।१९ को असिद्ध कर देता है अर्थात् हटा देता है, जिससे अकः सवर्णेदीर्घः इस वादी सूत्रका सत्कार हो जाता है। यों अपने प्रतिवादीसे सत्कार पाया हुआ वादी सूत्र अपने प्रतिवादीकी त्याग भावनासे प्रेरित हो स्वयं भी त्यागी बन जाता है। क य्+आस्तेमें लगता ही नहीं है। क्योंकि अब तो उसकी प्रवृत्ति ही रुक जाती है। इससे समाजको कितनी शिक्षा मिलती रही है? यह देखनेकी बात है।

सो देखिये, प्रथम घरपर आये शत्रुका भी सत्कार करना चाहिये। यह लोपः शाकल्यस्य ८।३।१३ प्रतिवादीने शिक्षा दी। दूसरी बात यह है कि प्रत्युपकार ही उपकारका वदला है। यह शिक्षा अकः सवर्णेदीर्घः ६।१।१०१ वादीने दी। सबसे बढ़कर तो यह है कि पूर्वत्रासिद्धम् ८।२।१ यह न्यायाधीश अपने त्रिपादी रूपी घरके सूत्रोंको ही असिद्ध करता रहता है, इससे त्यागकी अद्भुत शिक्षा समाजको मिलती है। यों महर्षि पाणिनिने प्रयोग-सिद्धिके साथ-साथ एक अद्भुत भारतीय समाजकी शिक्षा अपने पाठकोंको दे रखी है, यही देखनेकी बात है। महाराज ? किसीने ठीक ही कहा है :—

समाज - शिक्षा इससे मिले भली,
तथेतिहासादिक - सीख भी भली।
निरा न जाने यह शब्दकन्दली;
द्विजत्व की है यह सश्विका भली ॥

पद्मगुप्त—(उठकर) महाराज ? मैं पाणिनिजीकी दुर्बल-रक्षानीति से वड़ा ही चमत्कृत हो गया हूँ।

महाराज—जव हम लोगों को भी वह चमत्कार दिखावें, तव न हम जानें कि पाणिनिजी का क्या चमत्कार है ?

पद्मगुप्त—देखिये महाराज ? अग्ने + अत्र, वटो + अपसर्प इत्यादि प्रयोगोमें जहाँ भी एङः पदान्तादति ६।१।१०९ इस सूत्रकी प्रवृत्ति है, वहाँ सभी जगहोंपर तो एचोऽयवायावः ६।१।७८ यह सूत्र लगने के लिए डटा है। क्योंकि यह बलवान् है। इधर बायीं ओर भी सभी एच् हैं और दाहिनी ओर भी

अच् है। एङःपदान्तादति तो बड़ा ही दुर्बल है। इधर बायीं और पदान्त एङ ही चाहते हैं। उधर दाहिनी ओर केवल ह्रस्व अ चाहता है। यों दुर्बल होनेके कारण लगनेका मौका न मिलनेसे वह निरवकाश होने लगता है। ज्योंही वह निरवकाश होता है, त्योंही पाणिनिजीके "निरवकाशो विधि रपवादः" इस विधानके अनुसार वह अपवाद बन जाता है।

जब वह अपवाद बन गया, तब क्या कहना है ? तब तो परनित्यान्तरङ्गापवादानामुत्तरोत्तरं बलीयः इस परिभाषाका बल पाकर वह दुर्बलशास्त्र पाणिनिजीके दुर्बल-रक्षान्याय द्वारा सबसे बली हो जाता है। यही पाणिनिजी-का दुर्बल-रक्षान्याय है। बस इसी प्रकारसे तो सारा अष्टक शस्त्र ही पाणिनिजीके द्वारा उत्सर्गापवाद न्यायसे लिखा गया है। सो देखिये महाराज ? यों अपने प्रयोगों-की सिद्धिके बहाने समाजमें दुर्बलकी रक्षाकी शिक्षा देना यह पाणिनिजीकी ही विशेषता है। अब कहिये यह है न चमत्कार। इसीसे किसीने पाणिनीयाष्टकके सम्बन्धमें लिखा है —

(हरिगीतिका छन्द)

ये आठ जो अध्याय हैं वे आठ शिक्षा लोक की
भूगोलकी, इतिहासकी, साहित्यकी आचारकी।
व्यवहारकी, परनित्यकी अपवादके प्राबल्यकी,
जो पाणिनीजी कर दिखाते दिव्य शिक्षा न्यायकी॥

[इतना कहकर पद्मगुप्तजी बैठ जाते हैं]

उव्वट—(उठकर) महाराज ? सभी लोग अपने-अपने भावके अनुरूप ही पदार्थोंको समझते हैं। इसलिए मैंने भी अपना वेदभाष्य करते समय पाणिनिजीके द्वारा वैदिक प्रयोगोंकी सिद्धि देखकर बहुत प्रभावित हूँ।

महाराज—तो वेदकी वार्तासे हम लोगोंको भी पवित्र करेंगे ही।

उव्वट—आप लोग देख लें :—पाणिनिजी लौकिक प्रयोगोंकी सिद्धिके साथ-साथ अनायास ही वैदिक प्रयोगोंकी सिद्धि भी कर डालते हैं। देखिये :—अतोभिस् ऐस् ७।१।९ इस लौकिक सूत्रसे कर्णैः यह लौकिक प्रयोग सिद्ध होता है। उसीके नीचे बहुलं छन्दसि ७।१।१० इस वैदिक सूत्रसे कर्णेभिः यह वैदिक प्रयोग भी सिद्ध हो जाता है। इस प्रयोगमें भिस्के ऐस्को बहुल प्रकारसे होना (अर्थात् कहीं होना कहीं न होना) बताकर भिस्का ऐस् न करके बहुवचने झल्येत् ७।३।१०३ इस सूत्रसे भिस्को झलादि बहुवचन सुप् मानकर उसके परे रहते कर्णके अकारको एकार करके कर्णेभिः बना लेते हैं।

इस प्रकार सभी वैदिक प्रयोगोंको साधनेका कैसा चमत्कारपूर्ण प्रकार है। अतः मैं इस प्रकार प्रयोगसिद्धिके लिए सूत्रोंके विन्यासको भी बड़ा ही महत्त्व देता हूँ। ठीक कहा है किसीने :—

(हरिगीतिका छन्द)

बस पाणिनी मुनि की बनायी अष्ट अध्यायी सभी,
मतिमान अन्तेवासिगण कण्ठस्थ कर लें जो कभी।
क्रमपर जभी वे ध्यान देंगे भेद सबके पा गये,
बस दिव्य जीवन लाभकर पण्डित बड़े वे हो गये॥

(वसन्ततिलका छन्द)

क्या मैं कहूँ बुधवरो ? क्रमलोपसे हैं—
सूत्रीय दोष नहि वे कहते बने हैं।
होते न विघ्न जब लौकिक शब्दके वे,
तो क्या बनें विबुध वैदिक शब्दके वे ॥

[इतना कहकर उव्वटजी बैठ जाते हैं]

कालिदास—(उठकर) महाराज ! मैं तो पाणिनिजीकी छठे अध्याय चतुर्थपादकी असिद्धवदत्राभात् ६।४।२२ वाली असिद्धि देखकर विमुग्ध हो रहा हूँ।

महाराज—तो थोड़ी-सी उसकी वानगी हम लोगोंको भी दिखाइये।

कालिदास—देखिये महाराज शाधि प्रयोग बनानेके लिए अधिकारके सूत्रोंमें शा हौ ६।४।३५ सूत्र है। जो हि परे रहनेपर शास् धातुको शा आदेश कर देता है। यों शाहिकी स्थितिमें हुझल्भ्यो हे र्धिः ६।४।१०१ सूत्र जब हि को धि करना चाहता है तब असिद्धवदत्राभात् ६।४।२२ यहाँ अधिकारमें पहलेका किया कार्य पीछेके सूत्रोंके सामने असिद्धवत है, यह कहकर शाको शास् बना देनेसे झलन्त धातु बनाकर हिको धि कर देता है। यों शाधि प्रयोग सिद्ध हो जाता है। यों ही देखिये :—जहि यह प्रयोग हन् धातुके लिट् लकारके मध्यम पुरुषके एकवचनमें बनता है। यहाँ जब हन + हि की स्थितिमें अनुदात्तोपदेशवनतितनो त्यादीनामनुनासिकलोपो झलिंक्ङिति ६। ४।३७ से न् के लोप हो जानेपर हन्तेर्जः ६।४।३६ से हन्के ह का ज आदेश हो जाता है, तब ज + हि की स्थितिमें

अतोहेः ६।४।१०५ यह सूत्र हि का लोप करके प्रयोगको बिगाड़ना चाहता है, तब पुनः वहीं असिद्धवदत्राभात् सूत्र आकर ज को असिद्ध करके ह लाता है, इसके पश्चात् अनुनासिक लोपको असिद्ध करके हन् बताकर अत् के अभाव होनेसे हि का लोप नहीं होने देता। यह कैसा चमत्कार है। शाधिमें तो हि का धि करके असिद्धवदत्राभात्ने काम बना दिया और जहि में हि का लोप होनेसे जो काम बिगड़ रहा था, वह बिगड़ने नहीं दिया। उसे बिगड़नेसे असिद्धवदत्राभात्ने बचा लिया। कहिये, है न यह अद्भुत चमत्कार ? इसीसे मैं कहता हूँ :—

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

जो कोई जननी पितापि अथवा चाहे स्व सन्तान को,
वे हों विज्ञ करे यही यतनसे नीचे लिखे कार्यको।
जैसे हो बस पञ्च वर्ष वयसे दे दिव्य शिक्षा यही,
घोखें वे जिन कण्ठसे बस सदा सूत्रक्रमोंको सही ॥

[इतना कहकर कालिदास बैठ जाते हैं]

महाराज—आप सबोंकी पाणिनिमुनिके ऊपर श्रद्धा-भक्तिको देखकर मेरा उत्साह और बढ़ गया है। मैंने भी पाणिनिजीके प्रति अगाध श्रद्धा होनेके कारण पहले ही उनके गणपाठ, परिभाषापाठ, वार्तिक प्रभृति विस्तृत ग्रन्थोंको एकत्र करनेकी इच्छासे सूत्ररूपमें सरस्वतीकण्ठारण नामका विस्तृत व्याकरण-ग्रन्थ लिखा है, जिसमें उनकी अष्टाध्यायीके चार हजार सूत्रोंकी संख्यासे भी अधिक संख्या सूत्रों की है। मैंने उसमें अधिक सरलता लाने का

प्रयत्न किया है। मैं तो उनका हृदयसे अभिनन्दन करता हूँ। मेरा तो कहना है :—

(वसन्ततिलका)

जो पद्धति क्रममयी उनकी निकाली,
होते उसे पढ़ सभी प्रतिभा सुशाली।
हा! आज लोपकर पद्धति पाणिनीकी,
है धर्मकीर्ति बुधकी कृति तुच्छ फीकी॥

(वियोगिनी छन्द)

जबसे क्रमलोपकी चली—
परिपाटी उस धर्मकीर्तिकी।
तबसे प्रतिभा चली गयी—
स्वयमेवार्थकरी सुशिष्यकी॥

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

आती थी बहती नदी क्रममयी सूत्रार्थ देती स्वयम्;
श्रीमान् आपिशली मुनि प्रभृतिसे मेधा बढ़ाती स्वयम्।
आधे मार्ग पड़ी प्रविघ्न करती शून्याक्रमोंसे बनी,
बौद्धोंकी उन दीक्षितादि गणकी रीती पहाड़ी घनी॥

अस्तु, आजसे भी संस्कृताध्यायि-समाजमें, चेतना भगवतीका यदि चरणन्यास हो जाय, तो पाणिनि-पद्धति-का उद्धार हुआ ही समझिये। इसलिए मैं तो भवानीपति भगवान् शङ्करकी शरण लेता हूँ, जिन्होंने :—

(हरिगीतिका)

व्यास हो करके बचाया वेदराशि विभाग कर,
शाखा प्रभृतिके भेदसे अरु तन्त्रपन्थ चलाय कर।
इस लोकमें यह शब्दशास्त्र चला उन्हींके हेतुसे,
गिरिजेश ही रक्षा करें स्तुति पाणिनी सब हेतुसे॥

[भोजराज इतना कहकर पाणिनिमुनिकी ओरसे तथा अपनी ओरसे शिवजी पर पुष्प वृष्टि करेंगे।]

(परदा गिरता है)

ग्यारहवाँ दृश्य समाप्त

इति पञ्चमोऽङ्कः

अथ षष्ठोऽङ्कः

बारहवाँ दृश्य

[बालक-बालिकाएँ किसी विद्यालयमें पाणिनि-प्रशस्ति गाते हुए नृत्यकर रहे हैं। वहाँ ही कोई राजपुरुष संस्कृत जानते हुए भी बोलनेमें असमर्थ होनेके कारण उनके साथ हिन्दीमें बात करता है और वे लोग संस्कृतमें बोलते हैं जिससे सभी श्रोता चमत्कृत हो जाते हैं]

बालक बालिकाएँ—[गोलाकार नृत्य करते गा रहे हैं, देखिये निष्क्रम पद्धतिके दोषको]

(स्रग्विणी छन्द)

सूत्रवृत्ती स्वयं बालिकाएँ करें,
पाणिनी पद्धती लोग ढूँढा करें।
पद्धती आज जो वृत्ति - घोषाकारी,
छोड़ दो निष्क्रमारीति दोषाकरी ॥
निष्क्रमा पाठरीति चलायी कथम्,
हा हलन्त्यम् पुरः है सिखायी कथम्।
वृत्तिघोषा स्मृती नाशती है सही,
कूपमण्डूकता लादती है यही ॥

[पाणिनि-पद्धति कैसी है देखिये]

सूत्र है आदिमें वृद्धिवाला पड़ा,
वृद्धि है आदिमें शब्द देखो बड़ा।
वृद्धि पावें तथा आर्षधी हों सभी,
पद्धतीं से मुनीकी सुधी हों सभी।

[लड़के गाते-गाते कुछ रुक जाते हैं]

राजपुरुष—(आगे बढ़कर) अये बालक बालिकाओ, क्या गाते हो ?
बालक बालिकाएँ :—

(स्रग्विणी छन्द)

पणिनीया प्रशस्ती सभी गा रहे,
बालिकाएँ तथा बाल भी गा रहे।
देशमें पूर्वसे रीति आयी यही,
पाणिनीया प्रशस्ती हमारी सही॥

राजपुरुष—क्यों गाते हो ? इसका कारण बताओ।

बालक बालिकाएँ :—

(स्रग्विणी छन्द)

शोभना औ मनोज्ञा मनोहारिणी,
पुण्यदा मञ्जुला माङ्गली तारिणी।
घोषके कण्ठ भी बालिकाएँ करें;
सूत्रवृत्ती स्वयं पाठिकाएँ करें॥

राजपुरुष—तब तो तुम लोग बहुत अच्छा काम करते हो। पाणिनिपद्धतिकी तो सभी ओरसे प्रशंसा ही प्रशंसा हो रही है। वह तो अद्भुत पद्धति है। सुनते हैं कि पाणिनीय पद्धतिके समर्थनमें शब्द-शास्त्रके प्रख्यात विद्वान् स्वर्गवासी होते हुए भी पाणिनि-प्रशस्ति नाटकके गौरवसे पृथिवीपर राजसभामें स्वर्गसे पधारेंगे।

बालक बालिकाएँ—

(स्रग्विणी छन्द)

आप लेवें सभीके यहाँ नाम भी,
तृप्त होवें हमारे भले कान भी।
कौन हैं वे सुधी और हैं वे कहाँ ?
आप भी साथमें तो चलेंगे वहाँ॥

(प्रमाणिका छन्द)

बड़े सुधी प्रसिद्ध जो कहें सुनाम कार्य भी।
निवास है कहाँ, कहो चलें अभी वहाँ सभी॥

राजपुरुष—हाँ, हाँ, मुझे उनका निवास, नाम तथा कार्य सभी याद हैं।

आप लोग सुन लें—दाक्षिणात्य राजाकी सभामें तो वे लोग आयेंगे ही और हरदत्त पण्डित, भट्टोजीदीक्षित, वरदराजभट्ट अपनी गुप्त बातें बतायेंगे और पाणिनिजीके प्रति अपनी श्रद्धा-भक्ति प्रकट करेंगे। अन्तमें नागेशभट्टजी पाणिनिजीकी परिभाषाओंकी प्रशंसा करेंगे। इसके बाद विदेशी विद्वान् रूस निवासी चिरवात्सकी, जर्मनी

देशीय फ्रांजवाप, वोथलिंग, मोक्षमूलरभट्ट तथा इंगलैण्डके मोनियर विलियम, अमेरिकाके ह्विटनी पुनः जर्मनी देशीय कीलहार्न, वाकस्नागस् और फ्रांस के पेरिस नगरनिवासी रेणु भी उपस्थित हो अपनी गाथा सुनायेंगे ।

चलो, चलो तुम लोग इन स्वर्गनिवासी आत्माओं-के दर्शन करो । वहाँ भारतमाताके भी दर्शन होंगे । एक पन्थ दो काज ।

बालक बालिकाएँ :—बाढं, बाढं, बाढं, हम लोग तो यही सोचते थे कि बौद्ध धर्मकीर्त्तिकी चलायी यह निष्क्रमा पाठरीति कैसे दीक्षित आदि वैदिक पण्डित विद्वानोंने अपना ली ? अच्छा वहाँ इन एतद्देशीय विद्वानोंके साथ विदेशी विद्वानोंमें चिरवात्सकी आदिसे लेकर आधुनिक रेणुतक पाश्चात्य पण्डितोंके दर्शन होंगे साथ ही भारतमाताके भी दर्शन होंगे । यह तो बड़ा लाभ है । चलो सभी चलें :—

(स्रग्विणी छन्द)

हाँ चलेंगे चलेंगे चलेंगे सभी ,
बालिकाएँ सभी ये चलेंगी अभी ।
जो स्वदेशी विदेशी जुटेंगे सुधी ,
श्रद्धया देख लें जो कहें वे सुधी ॥
धर्मकीर्ती सरीखे बड़े वे सभी ,
लोक में ख्यातकीर्ती सुधी वे सभी ।
हो ऋणी पाणिनीके कहाँ भागते ,
पद्धती पाणिनीकी अहो त्यागते ॥

आकुमारं यशः पाणिनीयं अभी,
छा रहा लोकमें विज्ञ जानें सभी।
क्या कहेंगे सुधी दीक्षितादी सभी,
धर्मकीर्ती कृतीका खुले पोल भी॥
चीरवात्सी मिलेंगे वहाँ रूसके;
जर्मनी आदि पाश्चात्य देशी सभी।
जो बड़े भक्त हैं पाणिनीके सभी,
देख लें भक्ति कैसी करें वे सभी॥

[इतना कहनेके पश्चात् सभी चले जाते हैं]

(परदा गिरता है)

बारहवाँ दृश्य समाप्त.

तेरहवाँ दृश्य

[दाक्षिणात्य वेशमें बैठे हुए मन्त्रिगण श्रेष्ठिवर्ग एवं विद्वानोंसे परिवेष्टित दाक्षिणात्य सनातनधर्मी राजाकी सभामें दाक्षिणात्य वेशमें ही हरदत्त पण्डित, भट्टोजिदीक्षित आदि दाक्षिणात्य विद्वानोंका तथा चिरवात्सकी प्रभृति विदेशी विद्वानोंका विदेशी वेशमें ही पहलेसे बैठे रूपमें परदा उठाकर प्रवेश कराना होगा]

राजमन्त्री—(उठकर) हे, हे विद्वान् सभासदो? पाणिनि-प्रशस्ति-अभिनयके अभिनेतारूपमें स्वर्गसे पधारे हुए हरदत्तपण्डित प्रभृति देश-विदेशके प्रसिद्ध विद्वानोंका स्वागत करते हुए, हम लोग उनकी असीम अनुकम्पाके आभारी हैं और

उनसे सानुरोध प्रार्थना करते हैं कि वे लोग अपना वक्तव्य क्रमशः इस सभामें व्यक्त करनेकी कृपा करें।

[मन्त्रीजीके बैठ जानेपर हरदत्त पण्डित गरजकर बोलेंगे]

हरदत्त—आर्य श्रौत-स्मार्त-धर्म-संरक्षक महाराज तथा सदस्य गण! मेरे संक्षिप्त वक्तव्यको सुननेकी कृपा करें। मैं सातवीं सदीका हरदत्त हूँ।

(हरिगीतिका छन्द)

जो पाणिनीकी प्रक्रियाके तर्क - वनमें घूमता,
स्वाधीन उस हरदत्त हरिंको कौन है जो चूमता।
पर-पूर्व त्रैपादी-समस्याऽभ्यास ठीक बता सके,
आभीय आदि असिद्धियोंमें कौन मुझको पा सके॥

इसी कारण मैंने पाणिनिजीके प्रभावसे प्रेरित होकर उनके अद्भुत ग्रन्थकी साङ्गोपांग मर्मप्रकाशिका काशिका सर्वार्थोपन्यास न्यासके रहते भी :—

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

जो देखा क्रमशः स्वतन्त्र मुनिकी सूत्रार्थकी-प्रक्रिया।
मैं तो मुग्ध बड़ा हुआ, खिल उठी मेरी मति-प्रक्रिया।
डाली है लिख काशिका विवृतिकी टीका भली मञ्जरी।
सर्वत्रैव जहाँ - तहाँ निज मतोंकी पूर्ति की मञ्जरी॥

[सभासद वाह, वाह क्या खूबी है बोलनेकी, कहते हुए ताली बजाते हैं]

हरदत्त—और भी ध्यानसे सुनिये :—

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सूत्रोंकी रचना चमत्कृति भरी सारल्यसे भी भरी,
जैसे बालक बालिका पढ़ सकें ऐसी कलासे भरी।
होते न्यास समान अद्भुतमयी टीका बड़ी सुन्दरी,
मैंने भी पद्मञ्जरी विरच दी टीका नवीना खरी ॥

[इतना कहकर हरदत्तजी बैठ जाते हैं। भट्टोजिदीक्षित एवं वरदराज दाक्षिणात्य देशमें ही घूमते हुए परस्पर बातें करते हैं]

भट्टोजिदीक्षित—प्रिय वरदराज ? हम लोगोंके ऊपर जो यह कुछ दिनोंसे जनभ्रान्ति फैल रही है कि ये लोग पाणिनिपद्धतिके विरुद्ध पद्धतिके प्रचारक हैं, इसे तो दूर करना है। क्योंकि :—

"अतथ्यस्तथ्योवा हरति महिमानं जनरवः"

चाहे झूठा हो या सच्चा हो, जनताके बीच कैसा भी अपवाद फैलना मनुष्यकी महिमाको गिराता ही है।

वरदराज—गुरुवर, मैं तो आपकी बातका पूर्ण रूपसे समर्थन करता हूँ। आप श्रेष्ठ हैं। अतः आप पहले अपने गम्भीर गरिमा भरे वाक्यों द्वारा इस जनभ्रान्तिको दूर करें। बादमें तो मैं मार्जनीसे झाड़ देनेके समान अपने ओजस्वी वाक्योंसे इस जनभ्रान्तिको जनहृदयसे निकाल भगाऊँगा ही।

भट्टोजिदीक्षित—साधुप्रिय वरदराज। साधु, तुमने ठीक समर्थन किया है। जनभ्रान्ति दूर करनेका तो यही सर्वश्रेष्ठ

उपाय है कि हम लोग अपने-अपने वचनोंसे ही इसे जन-हृदयसे निकालें। 'सत्यमेव जयते नानृतम्' ऐसी उक्ति भी है। तो पहले मैं अपना वक्तव्य उपस्थितकर रहा हूँ। बादको तुम बोलना।

[सभाकी ओर अभिमुख होकर]

हे, हे महाराजके पार्श्ववर्ती सदस्यगण ? आप लोग मेरे हृदयकी बातें सुनें—

मैंने बौद्ध धर्मकीर्ति द्वारा चलायी गयी रूपावतार प्रक्रियापर लिखी गयी रामचन्द्र दीक्षितकी प्रक्रिया कौमुदीके आधारपर यह 'वैयाकरण सिद्धान्त कौमुदी' इसलिए लिखी है कि महामुनि पाणिनिकी अष्टाध्यायी-की पूरी-पूरी व्याख्या हो जाय। कोई सूत्र छूटे नहीं। हम लोग कृष्ण यजुर्वेदकी तैत्तिरीय शाखाके ब्राह्मण हैं। हमारी तो मज्जामें ही सारा अष्टक पाठ रहता है। कानों-को खोलकर जो भी चाहें सुन लें:—

(उपजाति छन्द)

मेरे कुलोंकी यह रीति आती,
जहाँ पढ़ी वेदसमान जाती।
जो पञ्चपाठी मुनि पाणिनीकी,
जानें सभी ब्राह्मण बात नीकी ॥

और भी खूब सावधानीसे सुन लें :—

(भुजङ्गप्रयात छन्द)

सभी बाल पैतामहादि क्रमीयम्;
पढ़े जो हमारे यहाँ पाणिनीयम्।

हमारी यही पञ्चपाठी प्रथा है,
रची कौमुदी सर्वमान्या यथा है ॥

मैंने जो व्याकरणकी अन्तिम पुस्तक यह सिद्धान्त कौमुदी लिखी है, जिससे सभी छात्र अष्टाध्यायी सम्पूर्ण कण्ठ करके सारे सूत्रोंकी वृत्ति स्वयं बनाकर प्रयोगोंको मेरी सिद्धान्त कौमुदीके आधारपर आसानीसे साध लेंगे। बादमें प्रौढ़मनोरमा और महाभाष्य पढ़कर महावैयाकरण बन जायेंगे। मैंने तो यह स्वप्नमें भी नहीं सोचा था कि बिना अष्टाध्यायी घोखे केवल मेरी सिद्धान्त कौमुदी ही पढ़ी-पढ़ायी जायगी। और परीक्षाक्रममें वह मध्यमा परीक्षाका पाठ्यपुस्तक मानी जायगी। इसलिए महाराज, यहाँ तो वे ही दोषी हैं और पाणिनिजीके विद्वेषी हैं तथा छात्रोंके प्राणघाती हैं—जो बिना अष्टाध्यायी घोखाये ही उसपर भी मध्यमा परीक्षामें मेरी सिद्धान्त कौमुदी पढ़ाते हैं। वे छात्र भी कैसे अनभिज्ञ हैं, जो इस प्रकार भ्रष्ट-क्रमसे मेरी सिद्धान्त कौमुदी पढ़ते हैं। एक वार फिर भी कान खोलकर वे लोग मेरे वक्तव्यको सुन लें, जो मुझे पाणिनि पद्धतिके विरोधी समझते हैं—

(इन्द्रवज्रा छन्द)

मैंने बनायी यह कौमुदी है,
जो पाणिनी-अष्टक-कौमुदी है।
भाष्यानुसारी इसको पढ़ावें,
मुन्यष्टका–घोषणता चलावें ॥

[इतना कहकर भट्टोजिदीक्षित बैठ जाते हैं]

वरदराज—(उठकर पृथिवीपर दक्षिणपाद-प्रहार करता हुआ जोरसे) हे, हे भारतीय भाइयो ! आप लोगोंने मेरे गुरुजीकी गर्जनाको सुन रखा है, उसका गर्भितसार अभिप्राय भी समझ ही लिया है। अब मुझे तो इस निराधार जनभ्रान्तिको झाड़ू देकर निकाल फेंकना है कि हम दोनों पाणिनीय-पद्धतिके विरोधी हैं। हा, हा इतना उलटा संसार चलता है, जिसकी सीमा नहीं है। देखिये श्री रामचन्द्रजी क्या कहते हैं :—

(वसन्ततिलका छन्द)

जो सोचता हृदयमें वह दूर जाता,
जो चित्तमें न धरता वह पास आता।।
प्रातः बनूँ भुवनभूपति सोचता था,
हा दैवको वननिवास हि रोचता था ।।

महर्षि पाणिनिके सदा ऋणी अपनेको माननेवाले हम लोगोंने तो उनके सूत्रोंके आधारपर इस बुद्धिसे ग्रन्थ लिखे हैं कि हमारे ग्रन्थोंको अष्टाध्यायी पाठके बाद छात्र पढ़ेंगे तो शीघ्र ही वे व्याकरणके महान् पण्डित बन जायेंगे।

हम लोगोंने यह थोड़े ही सोचा था कि ये हमारे ग्रन्थ पढ़नेमें ऐसे बेढङ्गे तरीकेसे लगेंगे कि उसके मूलभूत अष्टाध्यायीको ही भूल जायेंगे। देखिये, हमारे आशय क्या हैं :—

(शालिनी छन्द)

अष्टाध्यायी पाठके बाद ही जो,
अन्तेवासी शीलते शास्त्र भी जो।

सोचा था जो शीघ्र ज्ञाता बनेंगे ,
क्या सोचा था मूलघाती बनेंगे ॥

और भी जैसे पुरुषोत्तमदेवने पाणिनीयाष्टाध्यायीका लघुसंस्करण भाषावृत्ति लिखा है, वैसे ही मैंने गुरुस्थानीय श्री भट्टोजी दीक्षितकी सिद्धान्त कौमुदीके लिए लघुकौमुदी मध्यकौमुदीको सीढ़ी बनाकर 'सूत्रेष्वदृष्टं पदं सूत्रान्तरादनुवर्तनीयं सर्वत्र" अर्थात् सूत्रमें जो पद नहीं हैं और वृत्तिमें लिखा है तो वह दूसरे सूत्रसे ही सर्वत्र लाना होगा। यह प्रक्रिया क्या बिना अष्टाध्यायी घोखे हो सकती है ? कदापि नहीं इसलिए संक्षेपमें सुनिये :—

(स्रग्धरा छन्द)

मैं औ मेरे गुरु भी नहि मुनिवरकी पद्धतीके विरोधी।
वे ही हैं प्राज्ञमानी विबुध मुनिकी पद्धतीके विरोधी।
अष्टाध्यायी न घोखे कहकर क्रमशः शिष्य को व्याकृती जो।
दे देते वे विचारे प्रथमहि उसके हाथमें कौमुदीको ॥

अब मैं अपना अन्तिम निवेदन करके विश्राम लेता हूँ :—

(शालिनी छन्द)

जो हैं सारे अष्टकाऽऽधारवाले ,
ऊहापोही सूत्रकी वृत्तिवाले ।
वे तो जायेंगे बड़े ग्रन्थ माने ,
अष्टाध्यायी पाठके बाद जानें ॥

[इतना कहकर वरदराजजी चले जाते हैं]

नागेशभट्ट—(उठकर) मैं सोलहवीं सदीका दाक्षिणात्य ब्राह्मण हूँ। मैंने पाणिनीजीके प्रभावसे प्रेरित होकर महाभाष्यकी प्रदीप टीकाकी प्रद्योत उपटीका लिखकर यद्यपि उनकी परोक्ष-सेवा तो की है, तथापि मेरे मनको इतनेसे सन्तोष नहीं था तो मैंने पाणिनिजीकी परिभाषाओंकी विशद व्याख्या करनेकी इच्छासे परिभाषेन्दुशेखर नामका बृहद् ग्रन्थ लिखकर उनकी साक्षात् सेवा की है। अधिक मैं क्या कहूँ, मेरे पारिभाषिक गान सुननेकी आप लोग कृपा करें, मैं इतनेसे अपनेको कृतकृत्य मानूँगा।

(हरिगीतिका छन्द)

परनित्य आदि विधान आगे अन्तरंग भली बनी।
अपवाद होकर कार्यकाल तथा यथोद्देशी बनी।
करती सभी है कार्य पाणिनि - सूत्र - ऊहापोहसे।
कहती कहीं सीधी कहीं उलटी पदोंके योगसे॥

(दोहा)

कर प्रवेश देखें यहाँ, परिभाषाका राज्य।
संख्यामें थोड़ी सही, सार्वभौम साम्राज्य॥

अहा हा, आदिशक्ति भगवती भवानीके समान परिभाषा भगवतीकी महिमा अवर्णनीय है।

(शिखरिणी छन्द)

कहीं तो ले जोड़े कहीं विधि विजोड़े पदधिया।
मनस्वी कार्यार्थी सुख-दुःख विचारे न सुधिया॥

भवानी है देवी जिमि जगत्‌की आदि जननी ।
परीभाषा वैसी पद-जगत्‌की आदि जननी ॥

[इतना कहकर गणेशभट्टजी बैठ जाते हैं]

राजमन्त्री—(उठकर) इसके बाद अब विदेशी विद्वान् लोग अपना-अपना अभिप्राय क्रमशः व्यक्त करेंगे।

चीरवात्सकी—(उठकर) मैं रूस-निवासी चीरवात्सकी हूँ। पाणिनिके सम्बन्धमें मेरा यह वक्तव्य है कि उनका अष्टक शब्दानुशासन मानव-मस्तिष्ककी सर्वश्रेष्ठ रचना है। अधिक मैं क्या कहूँ :—

(वसन्ततिलका छन्द)

मैं तो वही कह रहा निजभाव हैं जो ।
सोचें स्वतन्त्र अब, आप सभी हुए जो ॥
हो शीघ्र पाणिनिकृती जगमें सुचालू ।
प्राणव्ययेन करिये यह कार्य चालू ॥

[इतना कहकर चीरवात्सकी बैठ जाते हैं]

फ्रांजवष्प—(उठकर) उन्नीसवीं सदीका जर्मनी देशवासी मैं फ्रांसवष्प हूँ। पाणिनिजीके विषयमें मेरा कहना है कि उन्होंने धातुओंमें प्रत्ययोंको लगाकर शब्द बनानेका जो मार्ग निकाल दिया है, उससे हम सभी विदेशी उनके ऋणी हैं, क्योंकि प्राचीन और अर्वाचीन दोनों प्रकारकी शब्द-रचनाओंके लिए उनकी शब्दसर्जनकी यह शैली अमृतमय जीवनका काम करती है। यों संस्कृत भाषाके स्थायीकरणके साथ अन्य भाषाओंके संवर्धनका श्रेय उन्हींको प्राप्त है। मुझे तो यही कहना है कि :—

(वसन्ततिलका छन्द)

जो शास्त्र शिष्यगण थे पढ़ते खुशीसे ।
क्या कष्ट था ? सब करें स्वयमर्थ धीसे ॥
हा ! हो गया अब बड़ा वह दुःखदायी ।
जो वृत्तिघोष करना पड़ता बड़ा ही ॥

[इतना कहकर फ्रांसवप्प बैठ जाते हैं]

बोथलिङ्ग—(उठकर) उन्नीसवीं सदीका जर्मनी देशवासी बोथलिङ्ग मैं हूँ । मैं तो महावैयाकरण पाणिनिके गणपाठकी प्रथासे बड़ा विमुग्ध हूँ । उनकी शब्दसिद्धि-प्रक्रिया तो कमाल कर देती है । थोड़े ही में मैं यहाँ मुनिवरके विषयमें अपना विचार रख रहा हूँ :—

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

होते हैं सबही सुधी पढ़त ही सूत्रक्रमोंसे सही ।
जल्दीसे बस विज्ञता बहुमुखी आती उसीसे सही ॥
यूरोपीय सभी ऋणी उस ऋषीके हैं विदेशी यहाँ ।
विद्या बुद्धि विवेकिताऽद्भुत बड़ी है पाणिनीकी जहाँ ॥

[इतना कहकर बोथलिङ्गजी बैठ जाते हैं]

मोक्षमूलर—(उठकर) उन्नीसवीं सदीका जर्मनी निवासी मोक्षमूलर मैं हूँ । कैम्ब्रज (गोमती) तीर्थमें रहकर मैंने संस्कृत भाषा-के अभ्युदयके लिए बड़ा प्रयत्न किया है । मेरी दृष्टिमें पाणिनिजी सबसे मेधावी विद्वान् कहे जायेंगे । अष्टा-ध्यायी शब्दानुशासन तो उनकी प्रतिभाकी अमरकीर्ति-

स्तम्भ ही है। उसके सम्बन्धमें संक्षिप्त रूपसे मेरा विचार यह है :—

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

देखें पाणिनि पद्धति वह भली औ सुन्दरी माङ्गली।
वृद्धि प्राप्त करें पड़ा पद अहो है आदिमें माङ्गली॥
होती आर्ष मती पढ़े जब इसे श्रद्धामयी माङ्गली।
अष्टाध्याय दिगीश आठ समझें जो बुद्धिके माङ्गली॥

[इतना कहकर मोक्षमूलर बैठ जाते हैं]

मोनियर विलियम—(उठकर) उन्नीसवीं सदीका लन्दन निवासी मोनियर विलियम (मुनिवर विल्लम) मैं हूँ। पाणिनिजीके अष्टकके सम्बन्धमें मेरा मत है कि जैसे वृक्षके लिए बीज होता है, फूलके लिए कुड्मल होता है, वैसे ही पदरूपी वृक्षके लिए पाणिनिजीके चार हजार सूत्रोंकी अष्टाध्यायी बीजरूपसे संगृहीत है। पाणिनिजी संस्कृत व्याकरणके जनक हैं। उनके अष्टककी डेढ़ सौ (१५०) वैयाकरणोंने टीका की है। उनके सदृश सूक्ष्मेक्षिकाका विद्वान् आजतक किसी भी देशमें नहीं हुआ है। उनके सम्बन्धमें मैं थोड़ेमें यहाँ अपना विचार प्रकट कर रहा हूँ—

(स्रग्विणी छन्द)

कालिदासादि जो हो गये हैं सुधी।
पाणिनी पद्धतीके सभी वे सुधी॥
शङ्कराचार्य वर्यादि जो भी सुधी।
पाणिनी पद्धतीके ऋणी वे सुधी॥

हो गये ख्यात नामा सभी जो सुधी।
सर्व तन्त्र स्वतन्त्री बने जो सुधी॥
जो सभी ज्ञानवर्ती जलाते सुधी।
पाणिनीने बनाया सभीको सुधी॥

[इतना कहकर मोनियर विलियम बैठ जाते हैं]

ह्विटनी—(उठकर) उन्नीसवीं सदीका अमेरिकावासी ह्विटनी मैं हूँ। मैंने पाणिनि व्याकरणका खूब परिशीलन करके अपना व्याकरण लिखा है। मेरा तो यह अनुभव है किः—

(उपजाति छन्द)

जो भी पढ़ेगा क्रम-सूत्र-रीतिको,
स्वयं करेगा वह सूत्र-वृत्तिको।
मेधाकरी बोधविवर्धिनी बड़ी,
कृती मुनीकी उपकारिणी बड़ी॥

[इतना कहकर ह्विटनी बैठ जाते हैं]

कीलहार्न—(उठकर) हे, हे सभाध्यक्ष महोदय तथा अन्य उपस्थित सज्जनवृन्द ! बीसवीं सदीका जर्मनी निवासी कीलहार्न मैं हूँ। मैंने बीस वर्षतक भारतमें रहकर पाणिनीय व्याकरणका पातञ्जल महाभाष्यतक अध्ययन करके करके अपना लघु व्याकरण लिखा है। मेरी दृष्टिमें पाणिनी मुनिने तोः—

(उपजाति छन्द)

प्रारम्भमें दे शुभ वृद्धि शब्दको,
तथान्तमें दे 'अअ' भद्र सूत्रको।

दिखा दिया माङ्गलिकी स्वकीर्तिको,
फणीन्द्र गाते जिस दिव्य सूत्रको ॥

[इतना कहकर कीलहार्न महोदय बैठ जाते हैं]

वाकर नागर—(उठकर) बीसवीं सदीका जर्मनी निवासी वाकर नागर मैं हूँ। साठ वर्षतक भारतमें रहकर मैंने केवल पाणिनीय व्याकरणका विशेषरूपसे अध्ययन किया है और 'ऑल इण्डिया ग्रामेटिक' (प्राचीन भारतीय व्याकरण) नामक ग्रन्थ लिखा है। इसके अतिरिक्त मैंने पाणिनीय व्याकरणके आधारपर ही पूर्व और पश्चिमकी भाषाओंको समानता साधक भाषाशास्त्रीय नियम बनाये हैं। मेरी सम्मतिमें पाणिनीय-पद्धतिकी यह विशेषता है—

(इन्द्रवंशा छन्द)

प्रारम्भसे लेकर अन्त ले जहाँ,
सर्वत्र ही मङ्गल मूल मान ही।
होते महापण्डित मूल पाठसे,
हैं सूत्र सारे श्रुतिके समान ही ॥

[इतना कहकर वाकर नागर बैठ जाते हैं]

मैकडानल—(उठकर) मैं बीसवीं सदीका कैम्ब्रिज (गोमती) तीर्थ निवासी मैकडानल (मुग्धानल) हूँ। पाणिनिजीके सम्बन्धमें मेरा जो खास वक्तव्य है, वह यही है कि वैदिक व्याकरण मैंने पाणिनीयाष्टकके ही आधारपर लिखा है। शब्दरूपोंका प्रकृति प्रत्यय रूपसे विभाग सबसे पहले पाणिनिजीने किया है। उनका अष्टक सर्वाङ्गपूर्ण

अद्भुत एवं प्रामाणिक व्याकरण है। उसका सादृश्य संसारमें कहीं नहीं है। ध्यानपूर्वक मेरे विचारको आप लोग सुनें :—

(उपजाति छन्द)

सुने हमरी यह बात है भली,
स्वतन्त्र हैं आप विचारमें बली।
किया उन्हींने हमको ऋणी सही,
की कल्पना प्रत्यय धातुकी सही॥

[इतना कहकर मैकडानल बैठ जाते हैं]

रेणु—(उठकर) फ्रांसदेशकी राजधानी पेरिस नगरका निवासी बीसवीं सदीका रेणु मैं हूँ। अपनेको मैं पाणिनिजीका परम भक्त मानता हूँ। उनके पाणिनीयाष्टकके आधारपर लिखे गये प्रायः सभी वार्तिक, भाष्य, टीका, उपटीका, प्रटीका, टिप्पणी, उपटिप्पणी, प्रटिप्पणी, पञ्जिका, कुञ्जिका, न्यास, उपन्यास, मञ्जरी, प्रमञ्जरी प्रभृति सभी तत्सम्बन्धी ग्रन्थोंका परिशीलन करके मैंने अपना वैदिक व्याकरण लिखा है। पाणिनिजीकी परिभाषाओंके सम्बन्धमें भी मैंने ग्रन्थ लिखा है। शरणदेवकी दुर्घट वृत्तिका अनुवाद मैंने तथा काशिकावृत्तिका अनुवाद मेरे शिष्यने फ्रेंच भाषामें किये हैं। हाथ उठाकर हम लोगोंका कहना है कि :—

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

जैसी है श्रुति सत्य दिव्य प्रभुके निश्श्वाससे ही बनी ;
वैसी ही यह पाणिनी स्मृति भली नित्या सही है बनी।

जैसे अक्षर पाद आदि क्रम की है आनुपूर्वी वहाँ;
वैसे ही क्रमसूत्र शब्द सबकी है अनुपूर्वी यहाँ ॥

[इतना कहकर रेणु महोदय बैठ जाते हैं]

राजमन्त्री—(उठकर) आज आप लोगोंका—जिसमें प्रथम इस देशके निवासी हरदत्तपण्डित आदि विद्वानोंका तथा विशेषकर विदेशी विद्वानोंमें रूसनिवासी चिरवात्सकी और फ्रांजवष्प प्रभृति पाश्चात्य विद्वानोंका पाणिनिजीके सम्बन्धमें जो श्रद्धाभक्ति और अनुराग है, उसे देखकर हम सभी फूले नहीं समा रहे हैं। आज हमारा जगद्-गुरुत्व-भाव प्रत्यक्ष हो रहा है। जहाँ विदेशी आचार्यगण भारतीय पाणिनिकी इस प्रकार मुक्त कण्ठसे प्रशंसा कर रहे हैं, वहाँ जगद्गुरुत्व-भाव क्यों न चरितार्थ होगा। ठीक ही तो है, हमारे पाणिनिजी शिक्षाशाखके बड़े वैज्ञानिक मर्मज्ञ हो गये हैं। उनके सम्बन्धमें जो भी कहा जायगा, वह थोड़ा ही है। पाणिनिजीके सम्बन्धमें मेरा भी कुछ निजी विचार है। आप लोग उसे भी ध्यानसे सुनें :—

(शालिनी छन्द)

शिक्षा नीति न्याय भूगोल आदी,
वाणिज्यादि सर्व - धर्मज्ञतादी।
जो भी विद्या लोक-चातुर्यमें हैं,
अष्टाध्यायी आठ सोपानमें हैं ॥

आज मैं महाराज मनुका वह श्लोक सार्थक देख रहा हूँ :—

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥

(हरिगीतिका छन्द)

इस देशमें जन्मे हुए उस अग्रजन्मा विप्रसे ,
सब देशके मानव सिखें एकाग्र होकर चित्तसे ।
निज धर्मकी निज कर्मकी शिक्षा मनुष्य-चारित्रकी ,
आज्ञा मनू है जिन्होंने जन्मभूमि पवित्रकी ॥

आज हम भारतीय धन्य हैं, जिनके पूर्व पुरुष पाणिनिजीके विषयमें विदेशी विद्वानोंकी ऐसी अटूट भक्ति है। वे विदेशी विद्वान् भी धन्य हैं, जो विदेशी होते हुए भी अन्य देशमें उत्पन्न एक विद्वान्की यों मुक्त कण्ठसे प्रशंसा करते हुए नहीं अघाते। इससे यह भी ज्ञात होता है कि पण्डितगण गुणग्राही होते हैं। अतः मैं भी आप सभी विद्वानोंको हृदयसे धन्यवाद देकर अपना कर्तव्य समाप्त करता हूँ। बोलिये, मुनिवर पाणिनिजीकी जय।

[इतना कहकर राजमन्त्रीजी बैठ जाते हैं]

(परदा गिरता है)

तेरहवाँ दृश्य समाप्त

चौदहवाँ दृश्य

[सपुष्पधान्यमञ्जरीयुत त्रिशूलधारिणी भारतमाता स्वर्णसिंहासनपर विराजमान हैं। चारों ओर बालक-बालिकाएँ झण्डा फहराये हुए स्तुति करेंगे। उसी समय पर्दा उठेगा]।

बालक बालिकाएँ—(झण्डा फहराते हुए)

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि,
अहमादित्यैरुत विश्वदेवैः।
अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी,
अहमश्विनोभा॥ ऋग्वेद॥

अपरेऽपराश्च—

आर्या ओमिति यां स्तुवन्ति विबुधाः,
ओ गाडितीशानुगाः।
अल्लाहेति मुहम्मदीय-मतगाः,
बौद्धास्तु बुद्धं विदुः।
अर्हन्तं जिनगा अहूरमजदाम्,
यां पारसीका जगुः।
सिक्खाः सत्-श्री-अकाल इत्यभिदधु—
स्साद्या शिवा पातु नः॥

अन्योऽन्याच—

बहुरत्न-महानिधि-संबलितां,
फलपुष्प-नदी-जल-सस्य-भृताम्।

शिशुवृद्धवयस्क-जनौघ-युताम् ,
नमतामित-भारतमातृरसाम् !
जनिपालनपोषणमादधती ,
जननीव सुरक्षति वः सुदती ।
दधि-दुग्ध-घृतामृततैलरसाम् ,
नमतामित-भारतमातृरसाम् ॥

[इन बालकोंकी स्तुतिकी समाप्तिपर भारतमाता उठती हैं]

भारतमाता—(उठकर) ऐ मेरे प्रिय बालक बालिकाओ ! मैं तो प्रारम्भसे ही शान्तिमय मुद्रामें विराजमान एवं सर्वदा शान्तिप्रिय आप लोगोंके इस अभिनयको देख रही हूँ । मैं आप लोगोंके इस अभिनयसे बहुत प्रसन्न हूँ । आप लोगोंने आपसमें होड़ लगाकर अपने जिम्मे दिये गये अभिनय भूमिकारूपी कर्तव्य कर्मको ठीक-ठीक पालन करके जनतामें जो 'कर्तव्यपालन ही धर्मसार है' इस शिक्षा-रहस्यका प्रचारकर मेरी सेवा की है। इससे आप लोगोंकी धी, श्री, सम्पत्ति सभीकी वृद्धि हुई है और आप लोगोंने 'इति पाणिनि' इस पदका अर्थ जो जन-समुदायमें उद्घोषित किया है, यह भी परगुण-प्रख्यापन करना मानवधर्मके सारका प्रचाररूप अपना कर्तव्य ही किया है।

हमारी गोदमें तो दार्शनिकोंमें कणाद, गौतम, कपिल, पतञ्जलि, जैमिनि, बादरायण आदि; धर्मशास्त्रियोंमें मनु, याज्ञवल्क्य, गौतम, शंख, लिखित, पराशर प्रभृति; आलङ्कारिकोंमें भरत, रुय्यक, मम्मट, जयदेव, विश्वनाथ,

जगन्नाथ आदि; साहित्यिकोंमें वाल्मीकि, व्यास, दण्डी, भास, कालिदास, भवभूति, वाण, सुवन्धु, भारवि, माघ, श्रीहर्ष आदि; नीतिज्ञोंमें बृहस्पति, शुक्र, विदुर, चाणक्य, कामन्दक आदि; ज्योतिषियोंमें पराशर, आर्यभट, वाराहमिहिर, भास्कराचार्य प्रभृति; आयुर्वेदज्ञोंमें इन्द्र, भरद्वाज, दिवोदास, चरक, सुश्रुत, वाग्भट, शार्ङ्गधर, लोलिम्बराज आदि; वैयाकरणोंमें महेश, बृहस्पति, काशकृत्स्न, आपिशलि, शाकटायन आदि वड़े-वड़े विद्वानोंने अपना-अपना जीवन-नाटक समाप्त किया है। उन्हींमें पाणिनि भी एक महावैयाकरण हो गये हैं, जिनकी प्रशंसामें आप लोगोंने यह अभिनय किया है। उन्हींके ग्रन्थानुशासन अष्टकके आधारपर व्याकरणका अध्ययनाध्यापन होना चाहिए, जिसके मर्मज्ञ वहुतसे विद्वान् हो चुके हैं। आज भी इस बीसवीं सदीमें स्वामी दयानन्द सरस्वती नामके राष्ट्रनेता मेरे दिव्य सूनु हो चुके हैं, जिन्होंने पाणिनिकी विलुप्त पद्धतिका पुनः प्रचार वेदाङ्गप्रकाश नामकी ग्रन्थराशिका प्रणयन कर किया। इतनेमें ही वह सन्तुष्ट नहीं हुए अपितु, उन्होंने पाणिनिकी पूरी अष्टाध्यायीपर संस्कृत टीका भी लिखी और पाणिनिरचित वर्णोच्चारण शिक्षाके सूत्रोंका भी अन्वेषण कर उसे हिन्दी भाष्यके साथ प्रकाशित किया। अस्तु अब मैं आप लोगोंको धर्मरहस्य सुनाती हूँ। सावधान होकर सुनोः—

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्॥

अर्थात् धर्मका सर्वस्व सुनो और उसे सुनकर अपने मस्तिष्कमें बैठा लो कि जो काम तुम्हें स्वयं प्रिय न हो, वह दूसरोंके लिए भी न करो।

सङ्गच्छध्वं सम्वदद्ध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवाभागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते॥

अर्थात् सब लोग साथ मिलकर चलो; एक बात कहो, विचार भी समान रूपमें करो। जैसे देवता लोग एक प्रकारका ज्ञान रखते हुए परमेश्वरकी आराधना करते हैं।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्॥

अर्थात् सभी सुखी हों, सभी नीरोग हों, सभीका कल्याण हो, कोई दुःखी न होने पावे।

अच्छा तो अब आपके वेदपाठीजी मेरी ओरसे शिक्षा-वल्लीका उपदेश पढ़ सुनावें।

वेदपाठी—(उठकर) मैं भारतमाताकी आज्ञासे सज्जनोंको तैत्तिरीयो-पनिषद्की शिक्षावल्लीका उपदेश सुनाता हूँ। सावधान होकर सब सुनें:—

सत्यं वद। धर्मञ्चर। स्वाध्यायान्माप्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न प्रमदितव्यम्। कुशलान्न प्रमदितव्यम् भूत्यै न प्रमदितव्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्। देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्। मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथि-देवो भव। यान्यनवद्यानि कर्मणि तानि सेवितव्यानि नो

इतराणि। यान्यस्माकं सुचरितानि तानि त्वयोपा-स्यानि नो इतराणि। ये के चाऽस्मच्छ्रेयांसो ब्राह्मणा-स्तेषां त्वयासनेन प्रश्वसितव्यम्। श्रद्धया देयम्। अश्रद्धा देयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनो युक्ता अयुक्ता अलूक्षा धर्मकामाः स्युर्यथा ते तत्र वर्तेरन्, तथा तत्र वर्त्तेथाः। एष आदेश एष उपदेश एषा वेदोपनिषत्। एतदनुशासनम्। एवमुपासितव्यम् एवमुचैतदुपास्यम्[1] ॥ तैत्तिरीय०। प्र० ७। अनु० ११। कं० १।२।३।४।

---

१. अर्थ—सत्य बोलो। धर्म करो। स्वाध्यायसे प्रमाद मत करो। अपने आचार्य और विद्यालयके लिए धन संग्रह करके गृहस्थाश्रममें प्रवेश करो। सत्यसे प्रमाद मत करो। धर्मसे प्रमाद मत करो। स्वयं स्वाध्याय करनेसे तथा दूसरोंको पढ़ानेसे प्रमाद मत करो। देवताओं और पिता, माता आदिकी सेवामें प्रमाद मत करो। माताको देवता समझो। पिताको देवता समझो। आचार्यको देवता समझो। अतिथिको देवता समझो। समाजमें जो अनिन्दित धर्मयुक्त कर्म हैं उन सत्यभाषणादिका आचरण करो। अधर्मयुक्त कर्मों असत्य भाषणादिका आचरण कदापि न करो। जो हमारे सुचरित्र और धर्मयुक्त कर्म हों उन्हींका तुम नकल करो। हमारी बुरी आदतोंकी नकल कभी न करो। जो हमारे मध्यमें उत्तम विद्वान्, धर्मात्मा ब्राह्मण हैं उनका सत्कार करो और उनके पास बैठो तथा उनपर विश्वास करो। श्रद्धासे दान दो। अश्रद्धासे दान दो। शोभासे दान दो। लज्जासे दान दो। भयसे दान दो। प्रतिज्ञासे भी दान दो। जब कभी तुम्हें कर्म, शील तथा उपासना ज्ञानमें किसी प्रकारका संशय उत्पन्न हो तो जो वे विचारशील पक्षपातरहित योगी, अयोगी, आर्द्रचित्त धर्मकी कामना करनेवाले धर्मात्मा जन हों, जैसे वे धर्म-मार्गमें बर्तें वैसे तुम भी उसमें बर्ता करो। यही आदेश है। यही आज्ञा है। यही उपदेश है। यही वेदोंकी उप-निषद् है और यही शिक्षा है। इसी प्रकार बरतना और अपना व्यवहार सुधारना चाहिए।

भारतमाता—(उठकर) यह धर्मसार तो समाप्त हुआ, अब मैं आप लोगोंका क्या प्रिय करूँ ?

एक बालिका—इससे बढ़कर और क्या प्रिय होगा ? तो भी यह हो:—

श्रुति सम अवनीमें ग्रन्थ है पाणिनीका
हितकर सुरवाणी में रचा जो सुनीका
द्विजकुल बटुकोंको आदिमें ही पढ़ाओ
तब अनुपम मेधा शक्ति विद्या बढ़ाओ।

(परदा गिरता है)

चौदहवाँ दृश्य समाप्त

इतिषष्ठोऽङ्कः

इति पाणिनिप्रशस्तिनाटकं समाप्तम्